भूमिका ।

इस पुस्तक के संग्रह करने का मुख्य आशय यह है कि सर्वसाधारण में नीतिविद्या का प्रचार हो जिससे सांसारिक कार्य्यों में सुगमता तथा सुलभता प्राप्त हो । प्रायः सब लोग कहते हैं कि यामिनी (फारसी) भाषा के पढ़ने से चाल चलन, मनुष्यत्व, शीघ्र प्राप्त होता, बुद्धि तीक्ष्ण हो जाती है, मनुष्य थोड़ेही समय में विचार और विचित्र शक्तिसम्पन्न हो जाते हैं इत्यादि; परन्तु विचारने से निश्चय होता है कि वही शिक्षा उन विद्यार्थियों को दी जाती है जो हमारे नीतिशास्त्र और धर्म्मशास्त्र में भरी हैं । पूर्व में इसी शिक्षा के बल से हमारे पूर्वज लोग बल बुद्धि साहस धर्म्म और स्वतन्त्रता आदि से सम्पन्न रहते थे । इतिहासों में चाणक्य आदि का वृत्तान्त देखने से स्पष्ट प्रगट है । वर्तमान समय में हमलोगों की शिक्षा-प्रणाली ऐसी है कि प्रथम व्याकरण तब कोष, साहित्य तत्पश्चात् न्याय मीमांसा जोतिष आदि विद्याओं का बाल्यावस्था से युवावस्था तक अभ्यास करते हैं तिसके उपरान्त आवश्यक कार्यों के उपस्थित होने पर नीतिशास्त्र तथा धर्म्मशास्त्र को देखते हैं और यही कारण है कि ऊपर लिखे शास्त्रों का रङ्ग जम जाने पर नीतिशास्त्र

का रङ्ग नहीं जमता, न इसके अनुसार वर्ताव करते बनता इससे निश्चय हुआ कि हमलोगों को प्रथम अपने उचित कामों का विचार तथा धर्म्म सम्बन्धी बातों का अभ्यास करना चाहिये। हम जहां तक अपनी अच्छी बुद्धि के अनुसार सोचते हैं, अपर मतवाले समाजों में इसी नीति तथा निज धर्म्म सम्बन्धी शिक्षा का फल है जो आज दिन हम हिन्दू भाई उसे देखकर घर बैठे शरमाते हैं इत्यादि इन बातों को सोच विचार कर यह नीति विषयक पुस्तक प्रकाशित की गई है।

सम्प्रति अशिक्षा तथा अभ्यास के कारण प्रायः लोग नीति और उपदेश शब्द से इस प्रकार दूर रहते हैं कि अभ्यास कौन कहै, नाम सुनने से भी घृणा करते हैं। इसी पुस्तक का प्रथम खण्ड सन् १८८४ ई० मे छपवाकर महीनो तक "विचित्रोपदेश" के नाम से विज्ञापन दिया गया था, परन्तु एक भी ग्राहक न हुआ और वही जब "भड़ौआ संग्रह" के नाम से इश्तिहार दिया गया तो हर साल हजार पन्द्रह सौ पुस्तकें निकलने लगीं, इससे निश्चय हुआ कि यदि कोई मूर्ख ज़हरही पसन्द करता है तो उसी में लपेट कर उसे अमृत देना उचित है, तात्पर्य्य यह कि जिसमे वह शिक्षा पावे। सम्प्रति अपर विषयों की अपेक्षा हिन्दी भाषा में नीतिशास्त्र, धर्म्म-शास्त्र का अत्यन्त अभाव है ऐसे अवसर में मनुस्मृति,

विदुरनीति, चाणक्यनीति और धर्म्मशास्त्र आदि उपयोगी पुस्तकों का शुद्ध हिन्दी गद्य पद्य में अनुवाद होकर प्रचार पाना अत्यावश्यक है, परन्तु ऐसे कार्य्य के पूर्ण होने के लिये (जिससे धन, धर्म्म यश, मर्य्यादा और परस्पर ऐक्य उत्तरोत्तर बढ़ने की संभावना है) धनवान् और विद्वान् महापुरुषों की सहायता होना मुख्य है । हम चिरकाल से अपना समय ग्रंथावलोकन में लगाते हैं, अनेक विषयक रचना अलग २ एकत्र कर यंत्राधिपगणों की सहायता से छपवाते तथा आप लोगों की सेवा में पहुंचाते हैं और यह आप लोगों की कदर दानी है जो ऐसे कामों के लिये निरन्तर अवसर पाते हैं परन्तु एकाध महाशय यह प्रश्न मुँह पर लाते हैं कि सम्पूर्ण विषय पद्यही में क्यों प्रकाशित किये जाते हैं? इस लिये उनको भी अपनी छोटी बुद्धि के अनुसार कुछ सुनाते हैं। पद्य में सीमाबद्ध वाक्य का विश्राम, योजना तथा विषय की रोचकता, साहित्य की चमत्कारी इत्यादि एकत्र होकर वह लिपि एक ऐसी शक्तिसम्पन्न हो जाती है कि जिसको जिह्वाग्र हो जाने में कुछ कठिनता नहीं होती तथा महाभारत और बाल्मीकीय से जानना चाहिये, और वही गद्य लिपि है जो विश्राम की सीमा न रहने से स्मरणशक्ति से बाहर हो जाती और समय पर काम नहीं आती है इत्यादि, फिर ऐसे अवसर

में यदि छन्दोबद्ध विषय का प्रयोग किया जाय तो सर्वथा योग्यही है ।

"कविकीर्तिकलानिधि" के देखने से आप लोग जान सकते हैं कि आज दिन बिना छपी कैसी २ पुस्तकें है जिनके छपने तथा प्रचार पाने से सर्वसाधारण किस प्रकार लाभ उठा सकते हैं। यद्यपि हमलोग उन पोथियों के प्रकाशार्थ अहर्निश काशी बम्बई आदि नगरों में प्रबन्ध करते है; विदेशी महाशयों से अमुद्रित पुस्तकें मँगाकर उन्हे यथाशक्ति प्रसन्न करते हैं तथापि यथावत् ग्राहक न होने से यह कार्य्य पूर्णरीति से निर्बाहित नहीं होता, ऐसे कामों के लिये कम से कम एक हजार रुपया मासिक व्यय होना, वा एक हजार उदार ग्राहक होने चाहिये फिर देखिये कि बात की बात में कैसी २ पुस्तकें प्रकाशित हो कर सर्वसाधारण में प्रचार पाती हैं ।

हम पाठकों के जानने के लिये उन उत्साही विद्वान् पुरुषों का नाम यहां पर लिखते है जिनके द्वारा हमको पुस्तकों के सहायता मिलती है, १ कवि गोविन्द गीला भाई सिहोर काठियावाड, २ पण्डित युगलकिशोर मिश्र गन्धौली सीतापुर सूबे औध, ३ श्रीकृष्ण कवि असनी फतहपुर, ४ बाबू जगन्नाथ दास, शिवालय घाट, बनारस, ५ बाबू भगवानदास वर्म्मा, ईचाक, हजारीबाग ।

धनवान् विद्वान् और बुद्धिमान् सबही महाशयों

को हमारे इस विनय पर ध्यान देना तथा हमारे उ-द्देशों को साध्य करना चाहिये और नहीं, यदि उन महानुभावों के दृष्टिपथ में हमारीही भूल हो तौ भी पत्र द्वारा संशोधन करना चाहिये जिससे यह अमूल्य समय किसी और विषय में लगाया जाय। हम अन्त में श्री३ बाबू रामकृष्ण वर्म्मा सं० भारतजीवन को कोटिशः धन्यवाद देते हैं जो हमारे ऐसे मतिमन्दों की अभिलाषा पूर्ण करने में अपना अमूल्य समय और हजारों रुपये व्यय करते हैं।

दोहा।

जो गरीब पै हित करैं धन रहीम वे लोग।
कहा सुदामा बापुरो कृष्ण ताहि के जोग॥ १॥

हम अन्त में आप लोगों से आशा रखते है कि आप लोग भी बाबू साहब को हृदय से धन्यबाद देकर ग्राहक बढ़ाने की चेष्टा करेंगे जिससे उत्तरोत्तर ऐसाही मङ्गल समय प्राप्त होता रहेगा।

आपलोगों का कृपापात्र
मकछेदी तिवारी—डुमराँव।

श्रीगणेशाय नमः।

अथ भड़ौआसंग्रह।

चतुर्थ खण्ड।

मङ्गलाचरण

कवित्त।

अनलसिखा में करी धूम मलिनाई तैसे आबरन काई को बिमल बारि बर मैं। कोमल कमलनाल कण्टकटिहारो कीनो जलनिधि खारो सो तिहारो भूमितल मै॥ बैन सुने जगत कुबोली ठहरै है धनीराम कोऊ काहू को न जानि सकै मरमै। बङ्क बिधि बुद्धि को निसङ्क कहियत कान्ह पङ्क कीने सरनि कलङ्क सुधाधर मै॥१॥

सीता पायो दुख अरु पारबती बंझा तन नृग ने नरक पायो बेस्या गति पाई है। बेनु भये सुखी हरिचन्द नृप दुखी भये बलि को पताल स्वर्ग पूतना पठाई है॥ शङ्कर को विष-विषधर को दियो है अंग पांडव पठाये जहाँ विष अधिकाई है। हाल ठकुराइसि में बोलिबो अचम्भो यह ईश्वर के घर तें अपेलि चलि आई है॥२॥

मनुष्य परिचय।

दाता तें दुनी में सूम काजे जानियत भूमि कायर को जानिये समर माहँ सूर तें। पापी तें प्रगट पुन्य जानिये दुखीं तें सुखी निधनी को जानिये सु धनी धन कूर तें॥ भाषत सकल जाने भूप तें भिखारी चोर साहु तें पिछाने औ चतुर चित कूर तें। राति दिन सूर तें यों कंचन कचूर नर जान्यो जाय या बिधि सहूर बेस-हूर तें॥ १॥

पुरुषत्व।

बैर प्रीति करिबे की मन में न राखै संक राजा राव देखि के न छाती धक धाकरी। आपनी उमंग की निबा-हिबे की चाह जिनै एक सी दिखात तिनैं बाघ और बाकरी॥ ठाकुर कहत मैं विचार कै विचार देख्यो यहै मरदानन की टेक बात आकरी। गही जौन गही जौन छोड़ी तौन छोड़ दई करी तौन करी बात ना करी सो ना करी॥ २॥

वाक्य प्रशंसा।

सीख्यो सब काम धन धाम को सुधारिबे को सीख्यो अभिराम बाम राखत हजूर मै। सीख्यो सरजाम गढ़ कोर किला ढाहिबे को सीख्यो समसेर तीर डारे अरि ऊर मै॥ सीख्यो जन्त्र मन्त्र तन्त्र जोतिष पुरान सबै और कबिताई अन्त सकल सहूर मै। कहै कृपाराम सब

सीखबो न काम एक बोलिबो न सीख्यो सब सीख्यो गयो धूर मैं ॥ ३ ॥

छप्पै ।

करत उबटनो अंग न्हाय के अतर लगावत ।
चन्दन चर्चित गात बसन बहु भाँति बनावत ॥
पहिर फूल की माल रतन के भूषन साजत ।
ए नहिं सोभा देत नेक बोलत जो लाजत ॥
सबही सिगार को सार यह बानी बरसत अमृत झर ।
जेहि सुनत सबन के मन हरत रीझि रहत नित नृपति वर ॥

कुण्डलिया ।

मैया लज्जा गुनन की निज मैया सम जानि ।
तेजवन्त तन को तजत याको तजत न जानि ॥
याको तजत न जानि सत्यव्रत वारेहू नर ।
करत प्रान को त्याग तजत नहिं नेकु बचन वर ॥
सरत आपनी राखि रह्यो वह दसरथ रैया ।
राखी बलि हरिचन्द टेक यह जस की मैया ॥

द्रव्य प्रशंसा—छप्पै ।

टका करै कुलहूल टका मिरदंग बजावै ।
टका चढ़ै सुखपाल टका सिर छत्र धरावै ॥
टका माइ अरु बाप टका भाइन को भैया ।
टका सासु अरु ससुर टका सिर लाड़ लड़ैया ॥

सो एक टका बिन टुकटुका होत रहत नित राति दिन।
बैताल कहै बिक्रम सुनो धिक जीवन टक एके बिन ॥६॥

द्रव्य निन्दा—कवित्त ।

ईस के भजन में न भूसुर के तन में न रङ्ग धाम अन में कहूं न बृन्दाबन मै । ज्ञाति गुरुजन में न घोखे पित्र-गन में न उठे कवितन में न वेद उच्चरन मै ॥ कहे कबि-राम तें बसत प्रेत तन में बिचारि देखो मन में दया न जाके तन मै । कहा परगन में बनाय धनीगन में न लागे हरिजन में तो थूक ऐसे धन मै ॥ ७ ॥

एकता ।

सामिल में पीर में सरीर में न भेद राखै हिम्मत कपट को उघारै तौ उघरि जाय । ऐसे ठान ठाने तो बिनाहूं जन्त्र मन्त्र किये सांप के जहर को उतारै तौ उ-तरि जाय ॥ ठाकुर कहत कछु कठिन न जानो अब हिम्मति किये तें कहो कहा न सुधरि जाय । चारि जने चारिहूं दिसा तें चारो कोन गहि मेरु को हलाय के उखारैं तौ उखरि जाय ॥ ८ ॥

अनैक्य ।

फूट गये हीरा की बिकानी कनी हाट हाट काहू घाट मोल काहू बाढ़ मोल को लयो । टूट गई लङ्का फूट मिल्यो जो बिभीषन है रावन समेत बंस आसमान को गयो ॥ कहै कबि गङ्ग दुरयोधन से छत्रधारी तनक में

फूके तें गुमान बाको नै गयो । फूटे ते नरद उठि जात बाजी चौसर की आपुस के फूटे कहु कौन को भलो भयो ॥

नीको ।

तेल नीको तिल को फुलेल अजमेरही को साहेब दलेल नीको सैल नीको चन्द को । विद्या को बिबाद नीको राम गुन नाद नीको कोमल मधुर सदा स्वाद नीको कन्द को ॥ गऊ नवनीत नीको ग्रीषम को सीत नीको श्रीपति जू मीत नीको बिना फरफन्द को । जात-रूप घट नीको रेसम को पट नीको बसीबट तट नीको नट नीको नन्द को ॥ १० ॥

चोरी नीकी चोर की सुकबि की लबारी नीकी गारी नीकी लागती ससुरपुरधाम की । नाहीं नीकी मान की सयान की जबान नीकी तान नीकी तिरछी कमान मुलतान की ॥ तातहू की जीति नीकी निगमप्रतीति नीकी श्रीपति जू प्रीति नीकी लागे हरिनाम की । रेवा नीकी बान खेत सुंदरी सुवा नीकी मेवा नीकी काबुल की सेवा नीकी राम की ॥ ११ ॥

कुण्डलिया ।

छोटीहूं नीकी लगै मनि खरसान चढ़ी सु ।
बीर अग कटि सस्त्र सों सोभा सरस बढ़ी सु ॥
सोभा सरस बढ़ी सु अंग गजमद करि छीनहिं ।
द्वैज कला ससि सोहि सरद सरिता जिमि हीनहिं ॥

सुरतदलमली नारि लहति सुन्दरता मोटी।
अर्थिन को धन देत घटी सो नाहिन छोटी॥

फीको—कवित्त।

ताल फीको अजल कमल बिन जल फीको कहत सकल कवि हवि फीको रूम को। बिन गुन रूप फीको ऊसर को कूप फीको परम अनूप भूप फीको बिन भूम को॥ श्रीपति सुकवि महाबेग बिन तुरी फीको जानत जहान सदा जोह फीको धूम को। मेह फीको फागुन अबालक को गेह फीको नेह फीको तिय को सनेह फीको सूम को॥ १२॥

गुन बिन धनु जैसे गुर बिनज्ञान जैसे मान बिन दान जैसे जल बिन सर है। कण्ठ बिन गीत जैसे हित बिन प्रीति जैसे वेस्या रस रीति जैसे फल बिन तर है॥ तार बिन जन्त्र जैसे स्याने बिन मंत्र जैसे पुर्ष बिन नारि जैसे पुत्र बिन घर है। टोडर सुकबि तैसे मन में बिचारि देखो धर्म्म बिन धन जैसे पच्छी बिना पर है॥ १३॥

चन्द बिना रजनी सरोज बिन सरवर तेज बिन तुरंग मतंग बिना मद को। बिना सुत सदन नित-म्बिनि सुपति बिना बिना धन धरम नृपति बिना पद को॥ बिना हरि-भजन जगत सोहै जन कौन लौन बिन भोजन बिटप बिन छद को। प्राननाथ सरस सभा

न सोहै कबि बिन विद्या बिन बात ना नगर बिन नद को ॥ १४ ॥

विद्या बिन द्विज औ बगैचा बिना आसन को पानी बिना सावन सोहावन न जानी है। राजा बिना राज-काज राजनीति सोचे बिना पुन्य की बसीठी कहो कैसे धौं बखानी है ॥ कहै जयदेव बिना हित को हितू है जैसे साधु बिना संगति कलङ्क की निसानी है। पानी बिन सर जैसे दान बिन कर जैसे सील बिन नर जैसे मोती बिना पानी है ॥ १५ ॥

विद्या बिन ब्राह्मन बरात बिना बाजन को तेज बिना तुरै औ जपन बिना गुर को। रूप बिना गनिका औ दल जोग पन्द बिना नद बिना नगर गवैया बिना गर को ॥ मन्त्री बिन राजा और सभा बिन चातुर को बर बिना सुकवि कमान बिना सर को। जोबराज कानन करिन्द्र बिना जैसे तैसे पानी बिना पुरुष पखेरू बिना पर को ॥ १६ ॥

छप्पै ।

घर मलीन बिन घरनि धरनि बिन नृपति मलीनो।
मुख मलीन बिन पान मान बिन मानुष हीनो ॥
बिन दिनेस दिन मलिन मलिन पातन बिन तरुवर।
कुल सपूत बिन मलिन मलिन वारिज बिन सरवर ॥
विद्याबिहीन बाभन मलिन मलिन पूर्ष इक द्रव्य बिन।

यह जानि भनै कवि उदैमनि हिय मलीन हरिनाम बिन ॥

सखि बिन सूनी रैन ज्ञान बिन हिरदय सूनो ।
कुल सूनो इक पुत्र पत्र बिन तरुवर सूनो ॥
गज सूनो इक दन्द ललित बिन सायर सूनो ।
बिप्र सून बिन बेद भौंर बिन पुहुप बिहूनो ॥
हरि नाम भजन बिन सन्त अरु घटा सून बिन दामिनी ।
बैताल कहै बिक्रम सुनो पति बिन सूनी कामिनी ॥१८॥

कुण्डलिया ।

फीको है ससि दिवस में कामिनि जोबनहीन ।
सुन्दर मुख अक्षर बिना सरवर पङ्कजहीन ॥
सरवर पङ्कजहीन होत प्रभु लोभी धन को ।
सज्जन कपटी होत नृपति ढिग बास खलन को ॥
ए सातो हैं स्वल्प मरम छेदत पाजी को ।
ब्रजनिधि इनको देखि होत मेरो मन फीको ॥१९॥

सवैया—दुर्दिन ।

बन्धु बिरोध करो सगरो झगरो नित होत सुधा-रस चाटत । मित्र करै करनी रिपु की धरनीधर होय म न्याय निपाटत ॥ राम कहै विष होत सुधाधर नारि सती पति सों चित फाटत । भा बिधिना प्रतिकूल जबै तब ऊँट चढ़े पर कूकुर काटत ॥ १९ ॥

कवित्त ।

मेधा होत फूहर कलपतरु थूहर परमहंस चूहर की

होत परिपाटी को। भूपति मगैया होत ठाठ कामगैया होत गैबर चुअत मद चेरो होत चाटी को ॥ कहै शिव- नाथ कवि पुन्य कीने पाप होत बैरी निज बाप होत सांप होत साटी को । स्यारसुत सेर होत निधन कुबेर होत दिनन के फेर तें सुमेर होत माटी को ॥ २० ॥

सामान्यनीति—छप्पै ।

सर सर हंस न होत बाजि गजराज न घर घर।
तर तर सुफर न होत नारि पतिब्रता न घर घर ॥
तन तन सुमति न होति मलैगिरि होत न बन बन।
फन फन मनि नहिं होत मुक्त जल होत न घन घन ॥
रन रन सूर न होत हैं जन जन होति न भक्ति हरि ।
नर सुनो सकल नरहरि कहत सब नर होत न एक सरि ॥
जाचक लघुपद लहै काम आतुर कलकपद ।
लोभी दुर्जस लहैं असन लालची लहै गद ॥
उन्नति लहै निपात दुष्ट परदोष लहहि तकि ।
कुमति बिकलता लहै लहै ससै जु रहय चकि ॥
अपमान लहै निर्धन पुरुष ज्वारी बहु सकट लहहिं ।
जो कहहिं सहज कर्कस बचन सो जग अप्रियता लहहिं ॥

कवित ।

नटन को धाम ना नपुंसक को काम ना हिरिनी को अराम बाम बेस्या ना सहेलरी । जुवा को न सोच मासहारी को न दया होत कामी को न नातो गोत छाया

ना सहेलरी ॥ देवीदास बसुधा में बनिक न सुनो साधु कूकुर को धीरज न भाया है सहेलरी । चोर को न यार बटपार को न प्रीति होत लाबर न मीत होत सौति ना सहेलरी ॥ २३ ॥

जार को बिचार कहा गनिका को लाज कहा गदहा को पान कहा आंधरे को आरसी । निगुनी को गुन कहा दान कहा दारिदी को सेवा कहा सूम को अरगडन की डार सी ॥ मदपी को सुचि कहा साँच कहा लम्पट को नीच को बचन कहा स्यार की पुकार सी । टोडर सुकवि ऐसे हठी ते न टारे टरे भावै कहो सूधी बात भावे कहो फारसी ॥ २४ ॥

छप्पै ।

कृपिन बुद्धि जस हरै कोप दृढ़ प्रीति बिछोरहि ।
दम्भ बिनासै सत्य छुधा मरयादा तोरहि ॥
कुबिसन धन छय करै बिपति थिरता पति डारहि ।
मोह मरोरहि ज्ञान बिषय सब ध्यान बिडारहि ॥
अभिमान बिछेदहि बिनयगुन पिसुन मित्रगुरुता गिलहि ।
कुछ नष्टभ्यास नासै सुपथ दारिद सो आदर बिलहि ॥

सवैया ।

ईंट को बन्धन नीम को चन्दन नीच को नन्दन बाम को घूसा । माते को गान डफाली की तान सु गूंगा को ज्ञान कपूत को रूसा ॥ रङ्क की रीझ औ मौजी की

खीझ अजान की प्रीति जुआर की ।ा । ाज को दू-
सरो छेरी को तीसरो रेड़ को सूरो ार खु ।।२६।।

कादर ताज लों भिच्छुक लाज लों बीम ब्याज लों लाबर लेवा । पूस के मास में फूस को तापनो सूत को जापनो झांझर खेवा ॥ हे भगवन्त इतै नहि काम के राम के नाम के होंहि न लेवा । साधु को लूटनो धर्म को कूटनो धूम को घूटनो सूम की सेवा ॥ २७ ॥

पाप की सिद्धि सदा रिनिबृद्धि सुकीरति आपनी आप कही की । दुष्ट को दान कुसूक्ष न्हान औ दासी की संतति संतति फीकी ॥ बेटी को भोजन भूपन रांड को केसव प्रीति सदा परतीकी । युद्ध में लाज दया अरि के उर बाम्भन जाति से जीति न नीकी ॥ २८ ॥

नीति बुझायो सुझायो सु प्रीति कै नेक नहीं तिनको सनमाने । हानि औ लाभ को बूझे नहीं मन दीने बढ़ाय बितान के ताने ॥ साच कहौं गिरधारन जू करतव्य कहा सो नहीं पहिचाने । केतो उपाय करो धरि चाप पै मूरख दण्ड बिना नहि माने ॥ २९ ॥

मारन को पन कै जदुराय रहे इत आवत आप कन्हाई । जामे बढ़े कलकानि नहीं हम यों गुनि रोक्यो तिनै समुझाई ॥ सो उपकार गयो सिगरो अरु औरहूं गारी दई मनभाई । मूरख के मधि में परिबो गिरधारन है गुरु मूरखताई ॥ ३० ॥

सांप सुसील दयाजुत नाहर काक पवित्र औ सांचो जुआरी । पावक सीतल पाहन कोमल रैन अमावस की उँजियारी ॥ कायर धीर सती गनिका मतवारो कहा मतवारो अनारी । मोलियराम विचारि कहै नहीं देखी सुनी नरनाह की यारी ॥ ३१ ॥

पण्डित पण्डित सो खल मण्डित सायर सायर सो सुख माने । सन्तहि सन्त अनन्त भले गुनवन्तहि को गुनवन्त बखाने ॥ जा कहँ जा पह हेत नहीं कहिये सु कहा तिहि की गति जाने । सूर को सूर सती को सती अरु दास जती को जती पहिचाने ॥ ३२ ॥

बैद को बैद गुनी को गुनी ठग को ठग हूमक को मन भावै । काग को काग मराल मराल को कान्ध गधा को गधा खजुलावै ॥ कृष्ण भनै बुध को बुध त्यों अरु रागी को रागी मिलै सुर गावै । ज्ञानी सो ज्ञानी करै चरचा लबरा के ढिगा लबरा सुख पावै ॥ ३३ ॥

आँधरे को प्रतिबिम्ब कहा बहिरे को कहा सुर राग की तानै । आदी को स्वाद कहा कपि को पर नीच कहा उपकारहि मानै ॥ भेड़ कहा लै करै बुकवा हरवाह जवाहिर का पहचानै । जाने कहा हिजरा रति की गति आखर की गति का खर जानै ॥ ३४ ॥

पीनसवारो प्रवीन मिलै तो कहां लौं सुगन्धी सु-गन्ध सुंघावै । कायर कोपि चढ़ै रन में तो कहां लगि

चारन चाव बढ़ावै ॥ जो पै गुनी को मिलै निगुनी तौ पुखी कहै क्यों करि ताहि रिझावै । जैसे नपुंसक नाह मिलै तो कहां लगि नारि सिगार बनावै ॥ ३५ ॥

कवित्त ।

जैसे फल झरैं पै विहंग छाड़ि देत रूख भूआ देखि सुआ छाड़ै सेमर के डार को । सुमन सुगन्ध बिन जैसे अलि छाड़ि देत मोती नर छाड़ देत बिना आबदार को ॥ जैसे सूखे सर को कुरंग छाड़ि देत मग सिवदास चित्त फाटे छाड़ि देत यार को । जैसे चक्रबाक देस छाड़ देत पावस में तैसे कवि छाड़ देत ठाकुर लबार को ॥३६॥

सारस के नादन को बाद ना सुनात कहूं नाहकही बकबाद दादुर महा करै । श्रीपति सुकवि जहां ओज ना सरोजन की फूल ना फुलत जाहि चित दै चहा करै ॥ बकन की बानी की बिराजति है राजधानी काई सों कलित पानी हेरत हहा करै । घोंघन के जाल जामे नरई सेवार व्याल ऐसे पापी ताल को मराल लै कहा करै ॥ ३७ ॥

अगन बचाय सुभ चारो गन नाय अरु उक्ति उपजाय के बिसास्यो नाम हरि का । लोभ के अजान में सयान सब भूलि गयो कीबे परे जसही अधम ऐसे अरि का ॥ कहै कबि लाल और दान की कहां लों कहों माँगे तें न दियो जात जासों टूक खरिका । सूम को कवित्त

करि राज में गलानि होत परत छपाएबो छिनारि कै जो लरिका ॥ ३८ ॥

छप्पै ।

सॉंची है सब भाँति सदा सब बातन झूठी ।
कबहुं रोस सो भरी कबहुं प्रिय वचन अनूठी ।
हिंसा को डर नाहि दयाहूं प्रगट दिखावत ॥
धन लैबे की बानि खरचहू धन को भावत ॥
राखत जु भीर बहु नरन की सदा सँवारत रहत गृह ।
इहि भांति रूप नाना रचत गनिका सम नृप नीति यह ।
प्रथम धर्म्म चिन्तबे सहज निज मन्त्र विचारहि ।
चर चपला चहुंओर देस पुर प्रभा सँवारहि ॥
राग द्वेष हिय गोप बचन अमृत सम बोलहि ।
समय ठौर पहचानि कठिन कोमल गुन खोलहि ॥
निज जतन करै संचय रतन न्याय मित्र अरि सम गनय ।
रन महँ निरुक ह्वै संचरै सो नरिन्द्र रिपुदल हनय ॥४०॥
मूढ़ मस्करी तपी दुष्ट मानी गृहस्थ नर ।
नरनायक आलसी बिपुल धनवन्त कृपिनतर ॥
धर्मी दुसह सुभाव बेदपाठी अधर्मरत ।
पराधीन सुचिवन्त भूमिपालक निदेसहत ॥
रोगी दरिद्र पण्डित पुरुष बृद्ध नारिरसगद्धचित ।
एते बिड़म्ब संसार में इन सब को धिक्कार नित ॥ ४१ ॥
ज्ञानवान हठ करै निधन परिवार बढ़ावै ।

बँधुआ करै गुमान धनी सेवक ह्वै धावै ॥
पण्डित क्रियाहीन रांड़ दुरबुद्धि प्रमानै ।
धनी न समुझै धर्म्म नारि मरजादा भानै ॥
कुलवन्त पुरुष कुलबिधि तजै बन्धु न मानै बंधुहित ।
संन्यास धारि धन सग्रहै ये जग में मूरख बिदित -४२॥

सिथिल मूल दृढ़ करै फल चूंटै जल सींचै ।
ऊरध डार नवाइ भूमिगति ऊरध खींचै ॥
जे मलीन मुरझाय टेक दै तिनहि सँभारहि ।
टूटो कण्टकगलित पत्र गहि बाहर डारहि ॥
लघु बृद्ध करै भेदहि जुगल आलबाल करि फल भखै ।
माली समान जो नृप चतुर सो बिलसै संपति अखै ॥

तियबल जोबनसमय साधुबल सिवपद सम्बर ।
नृपबल तेज प्रताप दुष्टबल बचन अडम्बर ॥
निर्धनबल सुमिलाप दान सेवा जाचकबल ।
बानिजबल व्यौपार ज्ञानबल बर विवेकदल ॥
इमि विद्या विनय उदारबल गुनसमूह प्रभुबल दरब ।
परिवार सुबल सु विचार कर होहि एकसम्मत सरब ॥

नरपतिमण्डन नीति पुरुषमण्डन मन धीरज ।
पण्डितमण्डन विनय तालरसमण्डन नीरज ॥
कुलतियमण्डन लाज बचनमण्डन प्रसन्नमुख ।
मतिमण्डन कवि कर्म साधुमण्डन समाधिसुख ॥

बर भुजसमर्थ मण्डन छमा गृहपतिमण्डन विपुलधन ।
मण्डन सिधान्त रुचि सान्त कहि कायामण्डन नवल तन ॥

गई भूमि फिरि मिलै बेलि फिरि जमे जरे तें ।
फल फूलन तें फलै फूल फूलन्त झरे तें ॥
केसव विद्या निकट बिकट बिसरी फिरि आवै ।
बहुरि होय धन धर्म्म गई सम्पत्ति फिरि पावै ॥
पुनि होय दुसील सुसील मति जगत हेत इमि गाइये ।
निसस्यो सु प्रान तन मिलत है पति न गई फिरि पाइये ॥

अग्नि होत जलरूप सिन्धु डाबर पद पावत ।
होत सुमेरहु सेर सिंह के स्यार कहावत ॥
पुहुप माल सम ब्याल होत बिषहू अमृत सम ।
बनहू नगर समान होत सब भाँति अनूपम ॥
सब सत्रु आय पायन परत मित्रहु करत प्रसन्नचित ।
जिनके सु पुन्य प्राचीन शुभ तिनके मंगल मोद नित ॥

गयो सूर समरत्थ पाय रन रसना माड़्यो ।
गयो सु जती कहाय विषयबासना न छाड़्यो ॥
गयो धनिक बिन दान गयो निरधन बिन धर्महिं ।
गयो सु पण्डित पढ़ि पुरान जो रति न सुकर्महिं ॥
सुत गयो मातु भक्तिबिन तिय सुगई जिहि पति न रत ।
नर गये सकल तुलसी कहत जो न रामपदनेहरत ॥ ४८ ॥

जिहि मुच्छन धरि हाथ कछू जग सुजस न लीनो ।
जिहि मुच्छन धरि हाथ कछू परकाज न कीनो ॥

जिहि मुच्छन धरि हाथ कछू पर पीर न जानी ।
जिहि मुच्छेन धरि हाथ दीन लखि दया न आनी ॥
यह मुच्छ नाहि है पुच्छ-अज कवि भरमी उर आनिये ।
नहिं बचनलाज नहिं दानरति तिहि मुख मुच्छ न जानिये ॥

कवित्त ।

ह्वै के महाराज हय हाथी पै चढ़े तो कहा जो पै बाहुबल निज प्रजन रखायो ना । पढ़ि पढ़ि पण्डित प्रवीनहू भये तो कहा बिनय बिबेक जुत जो पै ज्ञान गायो ना ॥ अम्बुज कहत धन धनिक भये तो कहा दान करि जो पै निज हाथ जस छायो ना । गरजि गरजि घन घोरन कियो तो कहा चातक के चोंच में जु रञ्च नीर नायो ना ॥ ५० ॥

गुनी वे कहाते जो न गुन तें गरूर करैं मुनी वे कहाते जो न बात बीच चटकैं । ज्ञाता वे कहाते जो न पापिन को संग करैं दाता वे कहाते जो न दान देत भटकैं ॥ कौन ब्रह्मचारी ? जो न नारिन तें यारी करैं बरती कहाते को न मद्य मांस गटकैं । छत्री वे कहाते जो न रन पाय मुख मोरैं चातुर कहाते जो न पातुर सों अटकैं ॥ ५१ ॥

सवैया ।

जिनके मन में चुगुली उचरी सु तो पाप की बीज बयो न बयो । जिनके मन में इक लोभ बस्यो तिन

औगुन और लयो न लयो । जिहँकी अपकीरति छाय रही जन सो जमलोक गयो न गयो । मधुसूदन में चित लीन भयो तिन तीरथ नीर पयो न पयो ॥ ५२ ॥

भुजङ्गिनी—छन्द ।

बनियक सखरज ठकुरक हीन । बयद क पूत व्याधि नहिं चीन ॥ पण्डित चुपचुप बेसवा मइल । कहे घाघ पांचों घर गइल ॥ ५३ ॥

नसकट खटिया दूलकन घोर । कहे घाघ यह बिपत क ओर ॥
बाछा बैल पतुरिया जोय । ना घर रहे न खेती होय ॥५४॥

नरिन्द्र—छन्द ।

आलस नीन्द किसाने नासै चोरे नासै खांसी ।
अँखिया लीबर बेसवे नासै तिरमिर नासै पासी ।
मुये चाम सों जियत कटावै सकरी भुइयां सोवै ॥
कहे घाघ ऊ तीनो भकुआ उढ़रि गये पर रोवै ।

भुजङ्गिनी ।

भुयां खेड़े हर ह्वै चार । घर ह्वै गिरिथिन गऊ दुधार ॥
रहर कि दाल जड़हन क भात । गागल‡ निबुआ औ घिव तात॥
सहरस अंड दही जो होय । बॉके नैन परोसे जोय ॥
कहे घाघ तब सबही भूठा । उँहां छांड़ि इहवैं बैकूंठा ॥

मज्जन—दोहा ।

सज्जन ऐसो चाहिये ज्यों मदार को दुद्ध ।
औगुन ऊपर गुण करै तौ जानो कुलसुद्ध ॥ ५८ ॥

‡ गागल = रसभरा ।

नम्र होत फलभार तरु जल भरि नम्र घटासु ।
त्यौं सम्पति करि सत पुरुष नवे सुभाव छटासु ॥५९॥
धीरज गुन ढार्यो चहै नाहिं ढकत कोउ चाल ।
जैसे नीचो अग्नि मुख ऊँची निकसत झाल ॥ ६० ॥
ससि कुमुदिनि प्रफुलित करत कमल बिकासत भानु ।
बिन मांगे जल देत घन त्योंहीं सन्त सुजान ॥ ६१ ॥
कोटि जतन कीने नहीं छुटै सुमन की लागि ।
सौ जुग पानी में रहै चकमक तजै न आगि ॥ ६२ ॥
जो रहीम उत्तमप्रकृत का करि सकत कुसंग ।
चन्दन विष लागै नहीं लपटो रहत भुजंग ॥ ६३ ॥
जादव जाके नीर को कबौं न अँचवत कोय ।
ताके पूत सपूत को क्यों न कालिमा होय ॥ ६४ ॥

छप्पै ।

दियो जनावत नाहिं गये घर कर सत आदर ।
हित करि साधत मौन कहत उपचार बचन बर ॥
काहू को दुख होय कथा वह कबहु न भाखत ।
सदा दान सो प्रीति नीतिजुत सम्पत्ति राखत ॥
यह खड्गधार ब्रत धारि के जे नर साधत मन बचन ।
तिनको सु सदा दोउ लोक में पूरि रह्यौ जसही रचन ॥६५॥

असज्जन—दोहा ।

दयाहीन बिनकाज रिपु तसकरता परिपुष्ट ।
सहि न सकत सुख और को ये सुभाय ते दुष्ट ॥६६॥

दुष्ट न छाडे दुष्ठता सज्जन तजै न हेत ।
कज्जल तजै न स्यामता मोती तजै न सेत ॥ ६७ ॥

गुन में औगुन खोजही हिये न समुझै नीच ।
ज्यों जूही के खेत में सूकर खोजत कीच ॥ ६८ ॥
तुलसी ओछे संग तें साधु बॉचते नॉहि ।
ठकठैना नैना करैं उरज उमेठे जॉहि ॥ ६९ ॥
ओछे नर के संग तें निसि दिन होत बिकार ।
नीर चोरावैं सम्पुठी मार खात घरियार ॥ ७० ॥
सज्जन पावत दुसह दुख पाप करत खल क्षुद्र ।
रावन ने सीता हरी बॉधो गयो समुद्र ॥ ७१ ॥
ओछे नर की प्रीति की दीनी रीत बताय ।
जैसे छीलर ताल जल घटत घटत घटि जाय ॥ ७२ ॥
दुष्ट न छाड़त दुष्टता कैसेहू सुख देत ।
धोयेहू सौ बेर के कज्जल होय न सेत ॥ ७३ ॥
कैसेहू छूटै नहीं जामें परी कुबानि ।
काग न कोइल ह्वै सकै जो बिधि सिखवै आनि ॥७४॥
ऊपर दरसै सुमिलसी अन्तर अनमिल आँक ।
कपटी जन की प्रीति है खीरा की सी फाँक ॥ ७५ ॥
दोष लगावत गुनिन को जाको हृदै मलीन ।
धरमी को दम्भी कहैं छमियन को बलहीन ॥ ७६ ॥
दया दुष्ट के चित्त में क्योंहूँ उपजत नाहिं ।
हिंसा छोड़ी सिंह ने क्यों आवै मन माहिं ॥ ७७ ॥

दुष्ट रहै जा ठौर पर ताको करै बिगार ।
आगि जहांही राखिये जारि करै तिहिं छार ॥७८॥
ओछे नर के चित्त में प्रेम न पूर्यो जाय ।
जैसे सागर को सलिल गागर में न समाय ॥ ७९ ॥
मूरख को हित के बचन सुनि उपजत है कोप ।
सांपहिं दूध पिआइये वाके मुख विष ओप ॥ ८० ॥

छप्पे ।

कमलतन्तु सों बाँधि गजहिं बस करन उमाहत ।
सिरिसि पुहुप के तार बज्र कै वेध्यो चाहत ॥
बूंद सहत की डारि समुद को खार मिटावत ।
तैसेही हित बैन खलन के मनहिं रिझावत ॥
वे नीच अपनपौ तजत नहिं ज्यों भुअंग त्यों दुष्ट जन ।
पय प्याय सुनावत रागहू डसिबेही में रहत मन ॥८१॥

दोहा ।

भले बुरे दोऊ रहैं चिरञ्जीव ससार ।
जिन तें गुन अरु दोष को जान्यो परत विचार ॥

मौन ।

सज्जनमनबसकरन को रचे बिधाता मौन ।
कूरनहू को आभरन मौन महा सुखभौन ॥ ८३ ॥
अप्रिय बचन दरिद्रता प्रीति बचन धन पूर ।
निज तियरति निन्दारहित वे महिमण्डल सूर ॥८४॥

गिरि तें गिरि परिबो भलो भलो पकरिबो नाग ।
अग्नि माहुँ जरिबो भलो बुरो सील को त्याग ॥

दुष्ट—छप्पै ।

निकरत बारू तेल जतन करि काढ़त कोऊ ।
मृगतृष्णा को नीर पियै प्यासो ह्वै कोऊ ॥
लहत ससा को शृंग ग्राहमुख ते मनि काढ़त ।
होत जलधि के पार लहर जाकी जब बाढ़त ॥
रिसभरे सरप को पुहुप ज्यों अपने सिर पर धरि सकत ।
हठभरे महासठ कुनर को कोऊ बस नहिं करि सकत ॥८६॥

नीति विषयक दृष्टान्त—दोहा ।

नीकी पै फीकी लगै बिन अवसर की बात ।
जैसे बरनत जुद्ध में रस सिँगार न सोहात ॥ ८७ ॥
फीकी पै नीकी लगै कहिये समय विचारि ।
सब के मन हरषित करै ज्यों विवाह की गारि ॥
जो जाको प्यारो लगै सो तिहि करत बखान ।
जैसे विष को विषभखी मानत सुधा समान ॥ ८९ ॥
जो जाको गुन जानहीं सो तेहि आदर देत ।
कोकिल अम्बहि लेत है काग निमौरी हेत ॥ ९० ॥
कैसे निबहै निबलजन करि सबलन सों गैर ।
जैसे बसि सागर विषय करत मगर सों बैर ॥ ९१ ॥
अपनी पहुंच विचारि के करतब करिये दौर ।

तेतो पाय पसारिये जेती लाम्बी सौर ॥ ९२ ॥

पिसुनछल्यो नर सुजन सों करत बिसास न चूक ।
जैसे दाध्यो दूध को पीवत छाछहिं फूक ॥ ९३ ॥

जौं रहीम सुख होत है बढ़े आपने गोत ।
ज्यों बड़री अँखियान लखि अँखियन को सुख होत ॥

जाय समानी अब्धि में गङ्ग नाम भो धीम ।
काकी महिमा ना घटी परघर गये रहीम ॥ ९५ ॥

जो रहीम गति दीप की कुल सपूत की सोय ।
बाढ़ै उँजियारो करै बढ़ै अँधेरो होय ॥ ९६ ॥

आप सदा बेकाम के साखा दल फल फूल ।
रोकत जाय रहीम कहँ औरन के फल फूल ॥ ९७ ॥

जो रहीम छोटे बढ़ैं बढ़त करत उतपात ।
प्यादे सों फरजी भयो तिरछो तिरछो जात ॥ ९८ ॥

जेती सम्पति कृपन की तेती तू मत जोर ।
बढ़त जात ज्यौं ज्यौं उरज त्यों त्यों होत कठोर ॥

नीच हिदे हुलसे रहैं बहै गेंद के पोत ।
ज्यौं ज्यौं माथे मारिये त्यों त्यों ऊँचो होत ॥१००॥

कोरि जतन कोऊ करै परै न प्रकृतिहि बीच ।
नलबलजल ऊँचे चढ़ै अन्त नीच को नीच ॥ १०१ ॥

ओछे बड़े न ह्वै सकै लगि सतरौहैं नैन ।
दीरघ होंहि न नेकहूं फारि निहारे नैन ॥ १०२ ॥

दुसह दुराज प्रजान को क्यों न बढ़ै दुख द्वन्द ।

अधिक अंधेरो जग करत मिलि मावस रवि चन्द ॥
आग कवन गुरु लहु जगत तुलसी और न आन ।
[illegible]ठा को हरिभक्ति सम को लघु लोभ समान ॥१०४॥
तुलसी बोलन बूझई देखत देख न जोय ।
तिन सठ को उपदेस कत करब सयाने कोय ॥१०५॥
गोधन गजध न बाजिधन और रतनधन खान ।
जब आवत सन्तोषधन सब धन धूर समान ॥१०६॥
ज्यों बरदा बनिजार को फिरत घनेरे देस ।
खांड़ भरे भुस खात है बिन गुर के उपदेस ॥ १०७ ॥
काम क्रोध मद लोभ की जौलौं मन में खान ।
का पण्डित का मूरखा दोऊ एक समान ॥ १०८ ॥
कीर सरिस बानी पढ़त चाखन चाहत खांड़ ।
मन राखत बैराग्य में घर में राखत रांड़ ॥ १०९ ॥
रामचरन परचै नहीं बिन साधनपदनेह ।
मुण्ड मुड़ाये बादिहो भाड़ भये तजि गेह ॥ ११० ॥
बुरे लगत सिख के बचन हिये विचारो आप ।
करुवे भेषज बिन पिये मिटै न तन को ताप ॥१११॥
रहे समीप वड़ेन के होत बड़ो हित मेल ।
सबही जानत बढ़त है वृच्छ बराबर बेल ॥ ११२ ॥
फेर न ह्वै है कपट सों जो कीजै ब्यौहार ।
जैसे हाँड़ी काठ की चढ़ै न दूजी बार ॥ ११३ ॥
मैना देत बताय सब हिय को हेत अहेत ।

जैसे निरमल आरसी भली बुरी कहि देत ॥ ११४ ॥

अति परिचय ते होत है अरुचि अनादर भाय ।
मलयागिरि की भीलनी चन्दन देति जराय ॥११५॥

जासों जैसो भाव सो तैसो ठानत ताहि ।
ससिहि सुधाकर कहत कोउ कहत कलङ्की आहि ॥

भले बुरे सब एक से जौलौं बोलत नाहिं ।
जान परत है काक पिक रितु बसन्त के माहिं ॥११७॥

हितहू को कहिये न तिहि जो नर होय अबोध ।
ज्यौं नकटे को आरसी होत दिखाये क्रोध ॥ ११८ ॥

अति अनीति लहिये न धन जो प्यारो मन होय ।
पाये सोने की छुरी पेट न मारे कोय ॥ ११९ ॥

मधुर बचन ते जात मिटि उत्तमजन अभिमान ।
तनिक सीत जल तें मिटै जैसे दूध उफान ॥ १२० ॥

हरिरस परिहरि विषयरस संग्रह करत अजान ।
जैसे कोऊ करत है छाड़ि सुधा विष पान ॥ १२१ ॥

सुखद चन्द की चाँदनी सुन्दर सबै सोहात ।
लगी चोर चित्त जो लटी घटत रही मनि कात ॥

दुरदिन परे रहीम प्रभु दुरथल जैये भाग ।
जैसे जैयत घूर पै जब घर लागत आग ॥ १२३ ॥

जो रहीम भावी कहूं होत आपने हाथ ।
राम न जाते हरिन संग सीय न रावन साथ ॥१२४॥

जिन रहीम तन मन लियो कियो हिये में भौन ।

तासों सुख दुख कहन की रही कथा अब कौन ॥

रहिमन असुवा बाहिरे बिथा जनावत हेय ।
जाको घर ते काढ़िये क्यों न भेद कहि देय ॥ १२६ ॥

घर घर डोलत दीन ह्वै जन जन जाँचत जाय ।
दिये लोभ चसमा चखन लघु पुनि बड़ो लखाय ॥

इक भीजे चहले परे बूड़े बहे हजार ।
कितने औगुन जग करत नै बै चढ़ती बार ॥ १२८ ॥

संगति सुमति न पावहीं परे कुमति के धन्ध ।
राखो मेल कपूर में हींग न होय सुगन्ध ॥ १२९ ॥

सोहत संग समान सों यहै कहों सब लोग ।
पान पीक ओठन बनै नैनन काजर जोग ॥ १३० ॥

बुरौ बुराई जो तजै तौ मन खरो सकात ।
ज्यौं निकलङ्क मयङ्क लखि गनैं लोग उतपात ॥१३१॥

बरषि विश्व हरषित करत हरत ताप अघ प्यास ।
तुलसी दोष न जलद कर जो जड़ जरत जवास ॥

गुरु करिबो सिद्धान्त यह होइ यथारथ बोध ।
अनुचित उचित लखाय उर जाते मिटै बिरोध ॥

करत चातुरी मोहबस लखत न निज हित हान ।
सुक मरकट इव गहत हठ तुलसी परम सुजान ॥१३४॥

बातहि बातहि बनि परै बातहि बात नसाय ।
बातहि आदिहि दीप भौ बातहि अन्त बताय ॥

बञ्चक बिधि रत नय रहित बिधि हिंसा अति लीन ।

तुलसी जग महँ बिदितबर नरक निसेनी तीन ॥

एक बुरे सब को बुरौ होत सबल को कोप ।
अवगुन अर्जुन को भयो सब छत्रिन को लोप ॥१३७॥

अपनी अपनी ठौर पर सोभा लहत बिसेख ।
चरन महावरही भलो नैनन अञ्जन रेख ॥ १३८ ॥

कोऊ बिन देखे सुने कैसे करै विचार ।
कूप भेक जाने कहा सागर को विस्तार ॥ १३९ ॥

जैसो बन्धन प्रेम को तैसो बन्ध न और ।
काठ कठिन भेदै कमल छेदि न निकरै भौंर ॥ १०० ॥

जो सबही को देत है दाता कहिये सोय ।
जलधर बरखत सम विसम थल न विचारत कोय ॥

प्रकृत मिले मन मिलत है अनमिल ते न मिलाय ।
दूध दही तें जमत है काँजी ते फट जाय ॥ १४२ ॥

दोष भरी न उचारिये जदपि जथारथ बात ।
कहत अन्ध को आँधरो मान बुरो सतरात ॥ १४३ ॥

परघर कबहुं न जाइये गये घटति है जोति ।
रविमण्डल में जात ससि छीन कला छबि होति ॥

उत्तमजन की होड़ करि नीच न होत रसाल ।
कौवा कैसे चलि सकै राजहंस की चाल ॥ १४५ ॥

जिहि प्रसंग दूषन लगै तजिये ताको साथ ।
मदिरा मानत है जगत दूध कलारिन हाथ ॥१४६॥

धन दारा अरु सुतन में रहत लगाये चित्त ।

क्यों रहीम खोजत नहीं गाढ़े दिन को मित्त ॥१४७॥

गहि सरनागत राम की भवसागर की नाव ।
रहिमन जगत उधार कर और न कछू उपाव ॥१४८॥

मथत मथत माखन रहै दही मही बिलगाय ।
रहिमन सोई मीत है भीर परे ठहराय ॥ १४८ ॥

बड़े पेट के भरन में है रहीम दुख बाढ़ि ।
गज के मुख बिधि याहि ते दये दन्त द्वै काढ़ि -

प्रीतमछवि नैनन बसी परछबि कहां समाय ।
भरी सराय रहीम लखि आय पथिक फिरि जाय ॥

को कहि सकै बड़ेन सों लखे बड़ीये भूल ।
दीने दई गुलाब को इन डारन ये फूल ॥ १५२ ॥

सीतलता रु सुगन्ध की घटै न महिका मूर ।
पीनसवारो जो तज्यो सोरा जानि कपूर ॥ १५३ ॥

संगति दोष लगै सबन कहत सांचउ बैन ।
कुटिल बंक भ्रू संग में कुटिल बंक भ्रू नैन ॥ १५४ ॥

स्वाति बूंद सीपी मुक्त कदली होत कपूर ।
कारे के मुख विष बढ़ै संगति सोभा सूर ॥ १५५ ॥

जिन दिन देखे वे कुसुम गई सुबीति बहार ।
अब अलि रही गुलाब की अपत कटीली डार ॥

तौ लगि जोगी जगत गुरु जौ लगि रहत निरास ।
जब आसा मन मे जगी जग गुरु जोगी दास ॥१५७॥

नीच निचाई नहिं तजै कितौ करै सतसंग ।

तुलसी चन्दन बिटप बसि बिन विष भौ न भुअंग ॥
दुर्जन दर्प्पन सम सदा करि देखो दिल गौर ।
सनमुख की गति और है बिमुख भये गति और ॥
दीरघ रोगी दारिदी कटु बच लोलुप लोग ।
तुलसी प्रान समान जो तुरत त्यागिबे जोग ॥१६०॥
जाके सँग दूखन दुरै करियै तिहि पहिचानि ।
जैसे समझैं दूध सब सुरा अहीरी पानि ॥ १६१ ॥
जिहि देखे लच्छन लगै तासों दृष्टि न जोर ।
ज्यों कोऊ चितवै नहीं चौथ चन्द की ओर ॥१६२॥
मूरख गुन समझै नहीं तौ न गुनी मे चूक ।
कहा भयो दिन की बिभौ देखी जौ न उलूक ॥१३३॥
सज्जन तजत न सजनता कीनेहूं अपकार ।
ज्यौ चन्दन छेदै तऊ सुरभित करत कुठार ॥१६४॥
करै बुराई सुख चहै कैसे पावै कोय ।
रोपै पेड़ बबूर को आम कहा ते होय ॥ १६५ ॥
होय बुराई तें बुरौ यह कीनो निरधार ।
गाड़ खनैगो और को ताको कूप तयार ॥ १६६ ॥
दुर्जन के संसर्ग ते सज्जन लहत कलेस ।
ज्यौं दसमुखअपराध तें बन्धन लह्यौ जलेस ॥१६७॥
कष्ट परेहू साधुजन नेकु न होत मलान ।
ज्यौं ज्यौं कंचन ताइये त्यों त्यों निरमल बान ॥
मिथ्याभाषी साचहूं कहत न मानै कोय ।

भांड़ पुकारै पीर बस मिसु समझै सब कोय ॥ १६९ ॥
ऊंचे बैठे ना लहैं गुन बिन बड़पन कोय।
बैठेव देवलसिखर पर बायस गरुड़ न होय ॥ १७० ॥
छमा बड़न को उचित है छोटन को उतपात।
कहु रहीम प्रभु का घटयो जो भृगु मारी लात ॥१७१॥
कहि रहीम नहि लेत है रह्यौ विषय लपटाय।
घास चरै पसु आप तें गुरु लों लाये खाय ॥ १२७ ॥
ये रहीम बुधि बड़न की घटि को डारत काढ़ि।
चन्द कूबरो दूबरो तऊ नखत सों बाढ़ि ॥ १७३ ॥
ससि सकोच साहस सलिल साजे नेह रहीम।
बढ़त बढ़त बढ़ि जात हैं घटे न तन की सीम ॥
दिन दस आदर पाय कै कर लै आप गुमान।
जौ लगि काग सराधपख तौ लगि तो सनमान ॥
मरत प्यास पिंजरा पर्‍यौ सुआ समै के फेर।
आदर दै दै बोलियत बायस बलि कि बेर ॥ १७६ ॥
को छुटयौ यह जाल परि मत कुरंग अकुलाय।
ज्यों ज्यों सुरझि भज्यो चहै त्यों त्यों अरुझयो जाय
निपट अबुध समुझै कहा बुधजन बचन बिलास ॥
कबहूं भेक न जानई अमल कमल की बास।
भलो होय नहि खल पुरुष भलो कहै जो कोय।
बिष मधुरो मीठो लवन कहे न मीठो होय ॥१७९॥
कारज धीरे होत है काहे होत अधीर।

समय पाय तरिवर फरै केतक सींचो नीर ॥ १८० ॥
उद्यम कबहुं न छाड़िये पर आसा के मोद ।
गागर कैसे फोरियत उनयो देखि पयोद ॥ १८१ ॥
क्यों कीजे ऐसो जतन जातें काज न होय ।
परबत पै खोदै कुआ कैसे निकरै तोय ॥ १८२ ॥
मिथ्या माहुर सुजन कहँ खलहिं गरल सम सांच ।
तुलसी परसि परात जिमि पारद पावक आंच ॥
बड़े दीन के दुख सुने लेत दया उर आन ।
हरि हाथी सों कब हुती कहु रहीम पहिचान ॥
बड़े सहजही बात में रीझि देत बकसीस ।
तुलसीदल ते विष्णु ज्यों आक धतूरे ईस ॥ १८५ ॥
सुधरी बिगरै बेगही बिगरी फिर सुधरै न ।
दूध फटै कांजी परै सो फिर दूध बनै न ॥ १८६ ॥
छोटे नर तें रहत हैं सोभाजुत सिरताज ।
निरमल राखै चाँदनी जैसे पायनदाज ॥ १८७ ॥
सब तें लघु है मांगिबो जामे फेर न सार ।
बलि पै जाचतही भये बामन तन करतार ॥ १८८ ॥
होत सुसंगति सहज सुख दुख कुसंग के थान ।
गन्धी और लोहार की देखो बैठि दुकान ॥ १८९ ॥
गुनवारो सम्पति लहै लहै न गुन बिन कोय ।
काढ़े नीर पताल तें जो गुनजुत घट होय ॥ १९० ॥
अरि छोटो गनिये नहीं जाते होय बिगार ।

त्रिन समूह को छनक में जारत तनक अँगार ॥१९१॥
तुलसी साथी बिपति के विद्या विनय विवेक।
साहस सुकृतो सत्यव्रत रामभरोसो एक ॥ १९२ ॥
कमला थिर न रहीम यह सांच कहत सब कोय।
पुरुष पुरातन की बधू क्यों न चंचला होय ॥ १९३ ॥
वे न इहां नागर बड़े जिन आदर तो आब।
फूल्यो अनफूल्यो भयो गँवई गाँव गुलाब ॥ १९४ ॥
छोटेहू अरि पै चढ़त रुजै सुभट तनत्रान।
लीजै ससा अखेट पर नाहर को सामान ॥ १९३ ॥
बीर पराक्रम ना करै तासों डरत न कोय।
बालकहू को चित्र को बाघ खेलौना होय ॥ १९६ ॥
नृपप्रताप तें देस में रहै दुष्ट नहिं कोय।
प्रगटत तेज दिनेस को तहां तिमिर नहिं होय ॥
सब देखै पै और को निज तन लखै न कोय।
करै उजेरो दीप पै तरे अँधेरो होय ॥ १९८ ॥
नीतिनिपुन राजान को अजगुत नाहिं सोहाय।
करत तपस्या शूद्र को ज्यों मार्यो रघुराय ॥ १९९ ॥
करत २ अभ्यास के जड़मति होत सुजान।
रसरी आवत जात तें सिल पर परत निसान ॥
मुख दिखाय दुख दीजिये खल सो लड़िये नाहि।
जो गुर दीमेही मरे क्यों विष दीजै ताहि ॥ २०१ ॥
बड़े बचन पलटैं नहीं कहि निरबाहैं धीर।

कियो विभीषन लङ्कपति पाय विजय रघुबीर ॥२०२॥
हार बड़े की जीत है निबल न मानै तास ।
बिमुख होय हरि ज्यों कियो कालयमन को नास ॥
बसिये तहां विचारि कै जहां दुष्ट डर नाहिं ।
होत न कबहूं भवर-डर ज्यों चम्पक बन माहिं ॥
रस जी कथा सुनी न जिन कूरकथा की चाहि ।
जिन दाखै चाखी नहीं मिष्ठ निमोरी ताहि ॥२०५॥
प्रेमी प्रीति न छाड़हीं होत न प्रन तें हीन ।
मरे परेहू उदर में जल चाहत है मीन ॥ २०६ ॥
दुष्ट संग बसिये नहीं दुख उपजत इहि भाय ।
घसे बांस की अगिन तें जरत सबै बनराय ॥ २०७ ॥
खीरा कौ सिर काटिकै मलिये लोन लगाय ।
रहिमन करवे मुखन की चहिये यही सजाय ॥२०८॥
कहूं कहूं गुन तें अधिक उपजत दोष सरीर ।
मधुरी बानी बोलि कै परत पींजरा कीर ॥ २०९ ॥
बिना कहेहू सतपुरुष पर की पूरैं आस ।
कौन कहत है सूर को घर घर करत प्रकास ॥२१०॥
बड़े बड़े तें छल करै जन्म कनौड़े होंहि ।
तुलसी श्रीपति सिर लसै बलि बावन गति सोहि ॥
हीन जाति न बिरोधिये होत तुरत दुखदाय ।
रजहू ठोकर मारिये चढ़त सीस पर आय ॥ २१२ ॥
कहा भयो जो नीच को दई बड़ाई कोय ।

कहत बिनायक नाम पै खर न बिनायक होय ॥

द्वै ही गति है बड़न की कुसुम मालती भाय ।
कै सबके सिर पै चढ़ै कै बन माहिं विलाय ॥ २१४ ॥

गति रहीम बड़ नरन की ज्यों तुरंगव्यवहार ।
दाग दिखावत आप ते सही होत असवार ॥ २१५ ॥

संपति सम्पतिमान को सब कोई सब देय ।
दीनबन्धु बिन दीन की को रहीम सुधि लेय ॥२१६॥

चेत रहीम सराहिये देन लेन की प्रीति ।
प्रानन बाजी राखिये हार होय की जीति ॥ २१७ ॥

अब रहीम चुप ह्वै रहो समुझि दिनन को फेर ।
जब दिन नीके आयहैं बनत न लागी देर ॥ २१८ ॥

दीनहिं सब कहँ लखत है दीन लखत नहिं कोय ।
जो रहीम दीनहि लखै दीनबधु सम होय ॥

कर लै सूघि सराहि के सबै रहे गहि मौन ।
गन्धी अन्ध गुलाब को गँवई गाहक कौन ॥ २२०॥

जो मूरख उपदेस के होते जोग जहान ।
दुरयोधन कह बोधि किन आये स्याम सुजान ॥

सूर सदन तीरथ पुरिन निपट कुचाल कुसाज ।
मनहुं मवासे मारि कलि राजत सहित समाज ॥

खाय न खरचे सूम धन चोर सबै लै जाय ।
पीछे ज्यों मधुमच्छिका हाथ मलै पछताय ॥ २२३ ॥

सब सों आगे होय कै कबहु न करियै बात ।

सुधरै काज समान फल बिगरै गारी खात ॥ २२४ ॥

उत्तम विद्या लीजिये जदपि नीच पै होय ।
पर्यो अपावन ठौर में कंचन तजै न कोय ॥ २२५ ॥

नृप अनीति के दोष तें चूके मन्त्र प्रयोग ।
कुपथी रोगी को नहीं करत सजीवन जोग ॥ २२६ ॥

कहा करै आगम निगम जो मूरख समुझै न ।
दरपन को दोष न कछू अन्ध बदन देखै न ॥ २२७ ॥

यों रहीम तन हाट मे मनुआं गयो बिकाय ।
ज्यों जल में काया परे छाया भीतर माय ॥ २२८ ॥

संपति भरम गँवाइ के तहां बसे कछु नाहिं ।
ज्यों रहीम ससि रहत है दिवस अकासै माहिं ॥

ऊगत जाही किरन सों अथवत ताही कांति ।
त्यों रहीम दुख सुख सबै बढ़त एकही भांति ॥

दुरदिन परै रहीम प्रभु सबै लेत पहिचानि ।
सोच नहीं धनहानि को होत बड़ी हितहानि ॥

जो बिषया सन्तन तजी मूढ़ ताहि लपटात ।
ज्यों नर डारत बमन करि स्वान स्वाद सों खात ॥

धन अरु जोबन को गरब कबहूं करिये नाहि ।
देखतहीं मिटि जात है ज्यों बादर की छाहि ॥

छोटे अरि को साधिये छोटो करि उपचार ।
मरै न मूसा सिंह तें मारे ताहि मजार ॥ २३५ ॥

सेवक सोई जानिये रहै विपति में संग ।

तन छाया ज्यों धूप में रहै साथ इक रंग ॥ २३५ ॥

बिना तेज के पुरुष की अवस अवज्ञा होय ।
आगि बुझै ज्यों राख को आनि छुवै सब कोय ॥

जहां रहै गुनवन्त नर ताकी सोभा होत ।
जहां धरै दीपक तहां निहचै करै उदोत ॥ २३७ ॥

तुला तुई की तुलयता रीति सजन की दीठ ।
गरुवे रिस को जाति है हरुवे को दै पीठ ॥ २३८ ॥

तुलसी झगरा बड़न के बीच परै जनि धाय ।
लरै लोह पाहन दोऊ बीच रुई जरि जाय ॥ २२९ ॥

बडे न हूजे गुनन बिन बिरद बड़ाई पाय ।
कहत धतूरे सों कनक गहनो गढ़यो न जाय ॥

सनहि लगाय रहीम प्रभु करि देखहिं जो कोय ।
नर को बस करिबो कहा नारायन बस होय॥ ॥

रहिमन पेटहि तें कहत क्यों न भई तू पीठ ।
भूखे मान बिगारही भरे बिगाड़े दीठ ॥ २४२ ॥

जो रहीम दीपकदसा तिय राखत पट ओट ।
समै परै ते होति है वाही पट की चोट ॥ २४३ ॥

रहिमन सूधी चाल सों प्यादो होत वजीर ।
फरजी मीर न ह्वै सकै टेढ़े की तासीर ॥ २४४ ॥

छोटे काम बड़े करैं तौ न बड़ाई होय ।
ज्यों रहीम हनुमन्त को गिरधर कहै न कोय ॥२४५॥

जो पुरुषारथ तें कहूं सम्पति मिलत रहीम ।

पेट लागि बैराट घर तपत रसोई भीम ॥ २४६ ॥

जानि बूझि अजगुत करै तासों कहा बसाय ।

जागतही सोवत रहै तिहि को सकै जगाय ॥ २४७ ॥

कबहूं प्रीति न जोरिये जोरि तोरिये नाहिं ।

जो तोरे जोरै बहुरि गांठ परै गुन माहिं ॥ २४८ ॥

सुनिये सबही की कही करिये सहित विचार ।

सर्बलोक राजी रहै सो कीजे उपचार ॥ २४९ ॥

कहे बचन पलटे नहीं जे सतपुरुष सधीर ।

कहत सबै हरिचन्द नृप भर्यो सुपच घर नीर ॥

जूआ खेले होत है सुख सम्पति को नास ।

राजकाज नल ते छुट्यो पाण्डव किय बनवास ॥

चलत सुपन्थ पिपीलका समुद पार ह्वै जाय ।

जो न चलै तो गरुड़हू पैगहु चल्यो न जाय ॥ २५२ ॥

नेगी दूर न होत हैं यह जानो तहकीक ।

मिटत नहीं क्योंहूं किये ज्यों हाथन की लीक ॥

कन दैबो सौंप्यो ससुर बहू थुरहथी जान ।

रूप रहचटे लगि रह्यो मांगन सब जग आन ॥

बहु धन लै अहसान कै पारो देत सराहि ।

बैदबधू हँसि भेद सों रहीं नाहमुख चाहि ॥ २५५ ॥

तुलसी मन्दिर देव के लागे लाख करोर ।

काग अभगा हग भरैं महिमा भयो न थोर ॥ २५६ ॥

लोकन को अपबाद को डर करिये दिन रैन ।

रघुपति सीता परिहरीं सुनत रजक के बैन ॥
भले भले बिधिना रचे पै सबही में कीन ।
कामधेनु पसु कठिन मनि दधि खारो ससि छीन ॥
कहा कहौं बिधि की अबुध भूले परे प्रबीन ।
मूरख को सम्पति दई पण्डित सम्पतिहीन ॥
बिधिना द्वै अनुचित करी वृद्धनरनलन काम ।
कुच टरकतहूं जगत में जीवत राखी बाम ॥

छप्पै ।

ससि कलङ्क रावन बिरोध हनुमन्त से बनचर ।
कामधेनु से पसू काय चिन्तामनि पत्थर ॥
अतिरूपा तिय बाँझ गुनी को निरधन कहिये ।
अति समुद्र से खार कमल बिच कण्टक लहिये ॥
से जाय व्यास केबंटिनी दुरवासा आसन छ्यो ।
कवि गिद्ध कहै सुनुरे गुनी कोउ न कृष्ण निरमल रच्यो।

दोहा ।

तृनहू तें अरु तूल तें हरुवो जाचक आइ ।
मागन के डर तें अनिल लियो न ताहि उड़ाइ ॥
परधन लेत छिनाय इक इक धन देत हसन्त ।
सिसिर करत पतझार तरु गहरो करत वसन्त ॥
ओछी मति जुवतीन की कहैं बिबेक भुलाय ।
दसरथ रानी के बचन बन पठये रघुराय ॥२६४॥
श्रवन करी त्यों कीजिये मातु पिता की सेव ।

काँधे काँवर लै फिर्यौ पूज्यौ जैसे देव ॥ २६५

बड़े जिती लघुता करैं तिती बड़ाई पाय ।
काम करैं सब जगत के तातें त्रिभुवनराय ॥ २६६ ॥

अनुचित उचित रहीम लघु करहि बड़न के जोर ।
ज्यों ससि के संजोग तैं पचवत आगि चकोर ॥२६७॥

मांगे घटन रहीम पद किती करो बढ़ि काम ।
तीन पैर बसुधा करी तऊ बावनै नाम ॥ २६८ ॥

बिगरी बात बनै नहीं लाख करो किन कोय ।
रहिमन बिगरे दूध को मथे न माखन होय ॥ २६९ ॥

रहिमन कबहूं बड़न के नाहिं गरब को लेस ।
भार धरे संसार को तऊ कहावत सेस ॥ २७० ॥

रहिमन अब वे बिरछ कहँ जिनकी छाँह गँभीर ।
बागन बिच बिच देखियत सेंहुड़ कुटज करीर ॥२७१॥

धनि रहीम जल पङ्क को लघु जिय पियत अघाय ।
उदधि बड़ाई कौन है जगत पियासो जाय ॥२७२॥

होय न जाकी छाँह डिग फल रहीम अति दूर ।
बाढ्यो सो बिन काजहीं जैसे तार खजूर ॥ २७३ ॥

जदपि पुराने बक तऊ सरवर निपट कुचाल ।
नये भये तो का भयो ये मनहरन मराल ॥ २७४ ॥

अरे हंस या नगर में जैयो आप बिडारि ।
कागन सों जिन प्रीति करि कोयल दई बिडारि ॥

कठिन कलाहूं आ परै करत करत अभ्यास ।

नट ज्यों चालत बरत पर साधे बरस छ मास ॥२७६॥

जो उपजै जैसे करै जिहि कुल जो अभ्यास ।
छोटे मच्छहु जल तरैं पच्छी उड़ैं अकास ॥२७७॥

जपत एक हरि नाम तें पातक कोटि बिलाय ।
जैसे कनिका आग तैं घासढेर जरि जाय ॥ २७८ ॥

गुन गरुवो लघुता गहै तिहि सनमानत धीर ।
मन्द तऊ प्यारो लगै सीतल सुरभि समीर ॥ २७९ ॥

बड़ी ठौर को लघु लहै आये आदर भाय ।
मलयाचल को ज्यों पवन परसे मन्द सुहाय ॥२८०॥

रस पोखे बिनही रसिक रस उपजावत सन्त ।
बिन बरसै सरसै रहैं जैसे बिटप बसन्त ॥२८१॥

नाद रीझि तन देत मृग नर धन हेत समेत ।
ते रहीम पसु तें अधिक रीझे कछू न देत ॥२८२॥

रहिमन नीचन संग बसि लगत कलङ्क न काहि ।
दूध कलारिन हाथ लखि मद समुझैं सब ताहि ॥

रहिमन निज मन की व्यथा मनही राखो गोय ।
सुनि अठिलैहैं लोग सब बाँटि न लैहै कोय ॥ २८४॥

रहिमन वे नर मरि चुके जो कहुं मांगन जाहिं ।
उन तें पहिले वे मरे जिन मुख निसरत नाहिं ॥

जाल परे जल जात बहि तजि मीनन को मोह ।
रहिमन मछरी नीर को तऊ न छाड़ति छोह ॥

रहिमन पानी राखिये बिन पानी सब सून ।

पानी गये न ऊबरे मोती मानुष चून ॥ २८७ ॥
बड़े बड़ाई ना तजैं लघु रहीम इतराइ ।
राइ करौंदा होत है कटहर होत न राइ ॥ २८८ ॥
करत निपुनई गुन बिना रहिमन निपुन हजूर ।
मानो टेरत बिटप चढ़ि इहि प्रकार हम कूर ॥२८९॥
बुद्धिमान बिबसहु परे अनुपम जुक्ति विचार ।
समय काज साधत सुधर डारत अबुध विगार ॥
प्रबल सत्रु बहे देखि के बुद्धिमान जो होय ।
आपुस मै झगराय के आपु रहै दुख गोय ॥ २९१ ॥
मूषक बुद्धि प्रताप सों राख्यो अपनो प्रान ।
तासों पण्डित राखिये साधन काज महान ॥ २९२ ॥
धन्य दूरदरसी मनुज धन्य प्राप्त कालज्ञ ।
ते अधन्य संसार में दीरघसूत्री अज्ञ ॥ २९३ ॥
सठ नर बहुत प्रसंसि के मूरख को जग माहिं ।
बेगहि सरबस हरत है यामे संसय नाहिं ॥ २९४ ॥
मूरख कोउ कारज करै पूरो एक न होय ।
बुध साधै सब काज को बिना प्रयासहि होय ॥२९५॥
दुष्ट साधु रूपहु धरै करिय नहीं बिसवास ।
ते विश्वासे होत दुख बरनत गिरधरदास ॥ २९३ ॥
गुरुसिक्षा मानै नहीं नहीं काहु सो नेह ।
कलह करै बिन बातही मूरख लक्षन एह ॥ २९७ ॥
मूरख भृत्य न राखिये कबहूं गिरधरदास ।

अति अबूझ आतुर करै सिगरो काज बिनास ॥
सात दीप अरु खण्ड नव मन्दर मेरु पहार ।
शेषहि इतो न भार है जितो कृतघ्नी भार ॥ २९९ ॥
मूरख को उपदेश बुध कबहुं न करिये सोध ।
हित बातैं मानै नहीं उलटो करै बिरोध ॥ ३०० ॥

इति नीतिप्रकरणम् ।

अथ नीति सम्मिलित उपदेश प्रकरण ।

कवित्त ।

एरे गुनी गुन पाय चातुरी निपुन पाय कीजिये न मैलो मन काहू जो कछू करी । बीरन बिराने द्वार गये को यही सुभाव मन अपमान काहू रे करी कि जू करी ॥ कूर औ कबिन्द चले जात हैं सभा के मध्य तोसें तो हटकि देवीदास पलटू करी । दरवाजे गज ठाढ़े कूकरी सभा के मध्य कूकरी सो कूकरी औ तू करी सो तू करी ॥

दोहा ।

उद्यम कीजै जगत में मिलै भाग्य अनुसार ।
मोती मिलै कि शंख कर सागर गोता मार ॥ २ ॥
बिन उद्यम नहिं पाइये कर्म लिखेहूं जौन ।
बिन जलपान न जायहै प्यास गगतट भौन ॥ ३ ॥
उद्यम मै निद्रा नहीं नहिं सुख दारिद मांहि ।
लोभी डर सन्तोष नहिं बीर अबुध में नाहिं ॥ ४ ॥

सन्यासी उद्यमसहित उद्यमरहित महीप ।
ये तीनो हैं नष्ट जग पवन सौंह को दीप ॥ ५ ॥
धन उपराजन कीजिये बिनसहिं दोष अनेक ।
विद्यावन्त कुलीन सब भजहिं धनहिं करि टेक ॥

छप्पे ।

या जग सो उतपति भये जे चरित मनोहर ।
ते सबही छिन भंग प्रगट यह पूरि रह्यौ डर ॥
ब्रह्मादिक तें स्वर्ग गये तेहू डर मानत ।
इन्द्र आदि सब देव अवधि अपनी को जानत ॥
फल भोग करत जे पुन्य को तिनको रोग बियोग भय ।
दुख रूप सकल सुख देखि कै भये सन्तजन ज्ञानमय ॥७॥

दोहा ।

सून सदन सन्तान बिन दिसा बंधु बिन सून ।
जीव सून विद्या बिना सब सूनो धन ऊन ॥ ८ ॥
सुमति धर्म आचार गुन मान लाज व्यवहार ।
ये सब जात दरिद्र सों समुझहु नृपति उदार ॥ ९ ॥
धनहि राखिये विपत्तिहित तिय राखिय धन त्यागि ।
तजिये गिरधरदास दोउ आतम के हित लागि ॥
चिता अधिक चिन्ता अहै दहै देह सब काल ।
यातें चिन्ता ना करिय धरिय धीर हर हाल ॥
चिन्ता जर है नरन को पट जर रवि नभ सोह ।
जर गृहस्त को बांझपन तिय जर कन्तबिछोह ॥१२॥

कुण्डलिया ।

एरे मन मेरे पथिक तू न जाहि इहि ओर ।
तरुनी तन बन सघन में कुच पर्वत बरजोर ॥
कुच पर्वत बरजोर चोर इक तहां बसत है ।
कर में लिये कमान बान पांचो बरसत है ॥
लूटि लेत सब सौज पकरि कर राखत चेरे ।
श्रवन नयन को मूंदि किते को भूल्यो एरे ॥ १३ ॥

दोहा ।

काम क्रोध मद लोभ ये अतिवैहीं दुखरूप ।
इन चारो को परिहरिय जो चहत सुख भूप ॥१४॥
बहुत कामवस होत जो मरत ताहि में तौन ।
सब सो अरि यह प्रबल है याहि हनिय छिति रौन ॥
करत क्रोध जो बूझ बिन पाछे पावत ताप ।
तातें क्रोध न कीजिये नीति बिचच्छन आप ॥१६॥
लोभ सरिस अवगुन नहीं तप नहिं सत्य समान ।
तीरथ नहिं मनसुद्धि सम विद्या सम धन जान ॥
लघुपन कृसपन कुटिलपन कहुं कहुं नीको जान ।
दूसन लङ्क कच भे जया जाहिर चारु जहान ॥१८॥

छप्पै ।

सज्जन सों हित रीति दया परिजन सो भाखहु ।
दुरजन सों सठभाव प्रीति सन्तन प्रति राखहु ॥

कपट खलन सों राखि विनय राखो बुधजन सों ।
छमा गुरू सों राखि सूरता बैरीगन सों ॥
जुवतीन संग कर धूर्तता जो तू जग हरिबो चहै ।
अतिही कराल कलिकाल है या चालन सों सुख लहै ॥

दोहा ।

जामें गुन अवलोकिये करिये ताहि मंजूर ।
बालबचनहूं मानिये होय नीति भरपूर ॥ २० ॥
इक हरि द्वै गज तीन बक चार कुकुट परिमान ।
पंच काक षट स्वान के गुनहिं लेहि गुनवान ॥२१॥
कैसो मृग आवै बली ताहि निपातै दच्छ ।
समर सूर यह सिंह को इक लच्छन अति अच्छ ॥२२॥
समुझि धरत पग धरनि में जामें पतन न होय ।
करत उताल न काज कछु ए गज लच्छन दोय ॥२३॥
करत काज अवसर निरखि सेवत थल एकन्त ।
सदा धीर दृढ़ चल नहीं बक गुन तीनि कहन्त ॥
समर प्रबल अति रति प्रबल नित प्रति उठत सवार ।
खाय असन सों बांटिकै ये कुक्कुट गुन चार ॥ २५ ॥
गूढ़ सुरति आलसरहित धृष्ट प्रमादबिहीन ।
औरुर लखि के घर करै पंच काक गुन पीन ॥ २६ ॥
स्वामिभगत रति रितु समय चढ़ सोवै चट चेत ।
बहुत खाय अल्पहि तृपित खटगुन स्वान समेत ॥

छप्पै।

खोदत डोल्यो भूमि गड़ी नहिं पाई सम्पति।
धौंकत रह्यौ पखान कनक के लोभ लगी मति॥
गयो सिंधु के पास तहां मुकुता नहिं पायो।
कौड़ी कर नहिं लगी नृपन के सीस नवायो॥
साधे प्रयोग समसान में भूत प्रेत बैताल सजि।
कितहूं न भयो कुछ मनोरथ अबतो तृष्णा मोंहि तजि॥

दोहा।

करिय बरोबर मनुज सो बैर व्याह अरु प्रीति।
घट बढ़ में रस ना रहै समुझहु भूपति नीति॥ २९॥
जेते जग में मनुज हैं राखो सब सों हेत।
को जानै केहि काल में बिधि काको संग देत॥३०॥
सबै वस्तु संग्रह करे करे समय पर काम।
बखत परे पै ना मिलै माटी खरचै दाम॥ ३१॥
कोप सुरति निन्द्रा असन सब जीवन को नात।
नर में अधिक विचार है ता बिन पशु ह्वै जात॥
कारज करिय विचारि के कर्म लिखो सो होय।
पाछे उपजै ताप नाहि निन्दो करै न कोय॥ ३३॥

कवित्त।

भोजन भनैये ते होत हलके हरामजादे अनहोसी आलसी तें हर्गिज हितैये ना। कलही कलंकी कूर कृपन कुनामी काक कपटी कुकर्मी क्रोधी किंचित हितैये ना॥

* * * चवाई चोर चंचल चलाकचित्त चोप चोय चखतिन तरफ चितैये ना । बदी बदराही बदनामी बद कौल बद बेदरद बेदिल सौं बातहू बतैये ना ॥ ३४ ॥

दोहा ।

महाबिटप को सेइये सुख उपजै अवनीस ।
जो न दैवबस फल मिलै छाह रहै तौ सीस ॥ ३५ ॥
पुन्य करिय सो नहिं कहिय पाप कहिय परकास ।
कहिबे तें दोऊ घटै बरनत गिरधरदास ॥ ३६ ॥
सुन्दर दान सुपात्र को बढ़ै सुल्क ससि तूल ।
आछे खेतहि बीज जिमि उपजत आनंद मूल ॥३७॥
दीनो दान कुपात्र को विद्या धूर्तहिं दीन ।
राखी में होम्यौ चरुहि फलीभूत नहिं तीन ॥ ३८ ॥
श्राद्धहीन बिन मंत्र को यज्ञ हीन बिन दान ।
हीन सुचार्चन भाव बिन दान हीन बिन मान ॥

छप्पै ।

तजहु जगत बिन भवन भवन तजि तिय बिन कीनो ।
तिय तजि जन सुख देय सुक्ख तजि सम्पति हीनो ॥
सम्पति तजि बिन दान दान तजि जहँ न विप्र मति ।
विप्र तजहु बिन धर्म धर्म तजिये बिन भूपति ॥
तज भूप भूमि बिन भूमि तजि दीह दुर्ग बिन जो बसै ।
तज दुर्ग सु केसवदास कवि जहां न जल पूरन लसै ॥

दोहा ।

सत कविता सतपुत्र अरु कूपादिक निरमान ।
इन तें नर को रहत है जाहिर नाम जहान ॥
धन दै लोभी करिय बस छल करि सठ हठ ऐन ।
कूर विनय करि करिय बस सूरहिं कहि मत बैन ॥
कुल गुनिये आचार लखि गुनिय बचन सो देस ।
भोजन लखि के बन गुनिय पटुता लखि के बेस ॥
भय लज्जा गुन चतुरता धर्म्मसील नहिं जन्त्र ।
पण्डित पुरुष विचारि के आस करैं नहि तन्त्र ॥
नृप सज्जन पण्डित धनी नदी बयद निज जाति ।
ए जा पुर में होंहिं नहिं तहां न बसिये राति ॥४५॥

छप्पै ।

बिमल चित्त करि मित्र सत्रु छल बल बस किज्जिय ।
प्रभु सेवा बस करिय लोभवन्तहि धन दिज्जिय ॥
जुबति प्रेमबस करिय साधु आदर बस आनिय ।
महाराज गुन कथन बन्धुसम रस सनमानिय ॥
गुमरमित सीसरस सो रसिक विद्याबल बुध मन हरिय ।
मूरख बिनोद सुकथा बचन सुभसुभाव जग बस करिय ॥

दोहा ।

तीन बात तहं नहिं करिय जहां प्रीति की चाह ।
जूवा धन-व्यवहार अरु अबला ओर निगाह ॥४७॥
बाद विहार अहार रन नृत्य गीत व्यवहार ।

नारि सदन ए आठ थल लाज न उचित उदार ॥
सत्य सुमति धीरज धरम बंधु मित्र सुत नारि ।
आपत में परखिय इनहिं गिरधरदास विचार ॥
तिय सुत सेवक सिष्य गुन जदपि प्रसंसा जोग ।
तदपि प्रसंसत ताहि नहिं सनमुख परिडत लोग ॥
गिरधरदास विचरि उर नहीं बोरिये नीर ।
धनी सूम निर्धन अतप विद्यावन्त अधीर ॥५१॥

सवैया ।

पातक हानि पिता संग हारिबो गर्भ के सूलन तें डरिये जू । तालन को बँध बँध धरीर को नाथ के साथ चिता जरिये जू ॥ पत्र पटै औ कटै रिन केसव कैंसहु तीरथ में मरिये जू । नीको सदा ससुरारि की गारि सु डाँड़ भलो जु गया भरिये जू ॥ ५२ ॥

दोहा ।

तरवर फूले बिपिन में मित्र उदय परदेस ।
ए दोउ काम न आवहीं समुझहु सत्य नरेस ॥ ५३ ॥
सुहृद बंधु परदेस में धन ताला के माहिं ।
विद्या पुस्तक मध्य ए समय सँभारे नाहिं ॥ ५४ ॥
वृद्ध गऊ जीरन बसन अधरम धन तजि देहु ।
अरु बनिता पर सुन्दरी खलमण्डल को गेह ॥ ५५ ॥
जज्ञ असत सो नास है राज कुमति सो नास ।
नास कहै सो दान फल पूजन बिन विश्वास ॥

नृपति मृतक बिन राज को बिप्र मृतक बिन कर्म ।
धन बिन मृतक गृहस्थ है जती मृतक बिन धर्म्म ॥

छप्पै ।

जीभि जोग अरु भोग जीभि सब रोग बढ़ावै ।
जीभि करै उद्योग जीभि लै कैद करावै ॥
जीभि स्वर्ग लै जाय जीभि सब नर्क दिखावै ।
जीभि मिलावै राम जीभि सब देह धरावै ॥
लै जीभि ओठ एकत्र करि बाँट सिहारे तौलिये ।
बैताल कहै विक्रम सुनो जीभि सँभारे बोलिये ॥

दोहा ।

सैन नष्ट बिन बीर के बीर नष्ट बिन धीर ।
धीर नष्ट उत्तालपन ताल नष्ट बिन नीर ॥ ५९ ॥

नगर नष्ट सरिता बिना धाम नष्ट बिन कूप ।
पुरुष नष्ट बिन सील को नष्ट नारि बिन रूप ॥
नष्ट रूप बर बसन बिन नष्ट असन बिन लौन ।
नष्ट सुमति बिन राजगृह नष्ट बास बिन भौन ॥
सूर काज सूरहि करै करै न कूर घमण्ड ।
स्यार हजारहु सिंह बिन गज सिर सकै न खण्ड ॥
नाहर भूखो रोग बस वृद्ध जदपि तन छीन ।
तदपि दुरद मरदन करत सूर होत नहिं दीन ॥६३॥

कवित्त ।

मनुज की सोभा पण्डिताई तें रहित है न सोभा

पण्डिताई की सभा बिना न पाई है । दास गिरधर है न सोभा सभा भूप बिना भूप की न सोभा बिना बुद्धि के सहाई है ॥ बुद्धि की न सोभा दयारहित जगत बीच दया की न सोभा जहां तुमुल लराई है । सोभा ना लराई की है सूर भरपूर बिना सोभा नहिं सूर की गरूर बिना गाई है ॥ ६४ ॥

दोहा ।

पण्डित सो राजा नहीं जानहु नर सिरताज ।
पण्डित पूज्य जहान में नृप पूजित निज राज ॥
तबलों मूरख बोलहीं जबलों पण्डित नाहिं ।
जबलों रवि नभ नहिं उदय तबलों नखत लखाहिं ॥
हंस न बक में सोहई तुरँग न रासभ माहिं ।
सिंह न सोहै स्यार में विज्ञ मूर्ख में नाहिं ॥ ६७ ॥
दर दर होत न गज तुरँग हंस न सर सर माहिं ।
नर नर होत सरूप नहिं घर घर पण्डित नाहिं ॥
जोबन रूप अनूप सब विद्या बिनु सोहै न ।
जथा अनाररून फल लखिय सुन्दर पै रस है न ॥

छप्पै ।

समय मेघ बरषंत समय सिर होत सबै फल ।
जरा जवानी समय समयही जात देहबल ॥
समय सिद्धहू मिलै समय पण्डितहू चूकै ।
समय प्रीति चित घटै समय सरवरहू सूकै ॥

कौउ द्वार जु आवै समयसिर समय पाय गिरवरहि निर।
गोविन्द अटल कविनन्द कहि जो कीजै सो समयसिर ॥

दोहा।

विद्या भूषन मनुज कहँ तिय भूषन अनुभाव ।
संन्यासी भूषन क्षमा पुर भूषन उमराव ॥ ७१ ॥
धन तें विद्या धन बड़ो रहत पास सब काल ।
देइ जितो बाढ़े तितो चोर न लेइ भुआल ॥ ७२ ॥
विद्या बिना बिबेक के बहु उद्यम बिनु अर्थ ।
धर्म्म बिना बैराग्य के मनुज बुद्धि बिन व्यर्थ ॥७३॥
सास्त्र पढ़े को सील फल वेद पढ़े को ज्ञान ।
दान भोग फल द्रव्य को तियरति फल सन्तान ॥
सज्जन को सन्तोष धन नृप धन सैन महान ।
तिय को धन पिय जगत में धन धन बैस्य प्रमान ॥

कवित्त।

माने सनमाने तेई माने सनमाने सनमाने सनमाने सनमान पाइयतु है। कहै कवि दूलह अजाने अपमाने अपमान सों सदन तिनहीं को छाइयतु है ॥ जानत है जेऊ तेऊ। जात हैं बिराने द्वार जानबूझ भूले तिनको सुनाइयतु है। कामबस परे कोऊ गहत गरूर तो वा आपने जरूर जाजरूर जाइयतु है ॥ ७६ ॥

दोहा।

आवत अति हित आदरत बोलत बचन बिनीति।

जिय पर उपकारहि चहत सज्जनकी यह रीति ॥
सज्जन माहिं दयालुता चञ्चलता तिय माहिं ।
सठहिं क्रूरता द्विजहिं तप सहज धरम ए आहिं ॥
तन अनित्य संगी धरम प्रभु जगकरता एक ।
तीन बात जो जनई सो पण्डित सबिबेक ॥ ७९ ॥
सब परतिय जेहि मातु सम सब परधर जिहि धूर ।
सब जीवन निज सम लखै सो पण्डित भरपूर ॥८०॥
लोभ पास में नहि फस्यो लगे न मनमथ बान ।
क्रोधानल में नहिं तप्यो सो नर विष्णु समान ॥

कवित्त ।

जोर परे जोर जात जर्ब परे भूमि जात भूमि जात जोबन अनंग रंग रस है । गढ़ ढहि जात गरुआई औ गरब जात जात सुखसाहिबी समूह सरबस है ॥ कहै हेमनाथ धन सम्पति बिपति जात जात दुख दारिद दरुन दरबस है । बाग कटि जात कुआ ताल पटि जात नदी नद घटि जात पै न जात जग जस है ॥ ८२ ॥

दोहा ।

भयत्राता पतिनीपिता विद्याप्रद गुरु जौन ।
मन्त्रदानि अरु असनप्रद पञ्च पितर छिति तौन ॥
तीन बरन को विप्र गुरु द्विज गुरु अग्नि प्रमान ।
कामिनि को गुरु कन्त है जग गुरु अतिथ सुजान ॥
तियहि कन्त पुत्रहि पिता सिष्यहि गुरु उदार ।

स्वामी सेवक देवता यह श्रुतिमत निरधार ॥
करिये विद्यावन्त को सेवक अरु सहबास ।
जातैं पावत अमित गुन अवगुन होत बिनास ॥
देसाटन राजासभा बारबधू को संग ।
बुधसेवन अरु शास्त्र ए पांच चतुरता अंग ॥ ८८ ॥

कवित्त ।

बैठिये न पनिघटा पैठिये न जल धाय ऐंठिये न बल पाय विद्या को सुधारिये । गाइये न मग राग छाइये न परदेस जाइये न सूम द्वारे वृथा गुन हारिये ॥ बोलिये न झूठी बात खोलिये न ऐगुन को डोलिये न खेत चढ़ि साहस सँभारिये । आपने पराये को सिखाये चहै वारी कवि अता की बचन यह मन में विचारिये ॥ ८९ ॥

दोहा ।

देस काल गुनि के चलै चतुर सोई जग स्वच्छ ।
उक्ति जुक्ति रचना रचै सो कवि मण्डल अच्छ ॥
काव्य सास्त्र आनन्द तें पण्डित के दिन जात ।
मूरख के दिन नींद में कलह करत उतपात ॥ ९० ॥
सुकवि भये पण्डित भये कहन न जानी बात ।
तौ सब पढ़िबो व्यर्थ है ज्यों फागुन बरसात ॥ ९१ ॥
बात समै की बरनिये प्रगटत चित्त हुलास ।
जैसे रुचत मलार अति पावस गिरधरदास ॥ ९२ ॥

बात भलीहू बिन समय नहिं सोहत निरधार ।
जिमि विवाह में बरनिये ज्ञान कथा परकार ॥९३॥

कुण्डलिया ।

पण्डित पर अरधीन को नहिं करिये अपमान ।
तृन सम सम्पति को गिनत बस नहिं होत सुजान ॥
बस नहिं होत सुजान पटाम्बर मद है जैसे ।
कमलनाल के तन्तु बँधे तें रहिहे कैसे ॥
तैसे इनको जान सबहि सुख सोभा मण्डित ।
आदर सों बस होत मस्त हाथी अरु पण्डित ॥९४॥

दोहा ।

महि में ऊसर व्यर्थ जिमि तरु में रेंड़ न काम ।
पसु में व्यर्थ सियार जिमि नर में मूरख जान ॥९५॥
मूरख जाने नेक नहिं विद्या बिनय बिबेक ।
जिमि षटरस के स्वाद की कोस न जाने एक ॥९६॥
द्विज हरषत मधुरहि निरखि मोर मुदित घन पेखि ।
सज्जन परसुख लखि मुदित दुरजन परदुख देखि ॥
जिहि सुभाव बिधि जिमि रची तिमि पावै सुख सोय ।
गिद्ध मृतक तन खात है नहिं गलानि मन कोय ॥
तजै दुष्ट नहिं दुष्टता करौ किती उपकार ।
हवन करत कर दहत ज्यों दहन भूमि भरतार ॥

सवैया ।

साहिबी होत अजानन को तौ सुजान दुखी कहूं

दाव न पावै। जो धन हाथ बुरे को लगै तौ भले जन को कहुं काम न आवै॥ जोगी बढ़ै तो कटाइ के चन्दन जारि के अंग बिभूत लगावै । राज चमार को हाथ लगै तो दिना दस चाम को दाम चलावै॥ १०० ॥

दोहा।

प्रान जाय तो जाय पर नहीं दुष्टहठ जाय ।
जरी परी रसरी तऊ ऐंठन प्रगट लखाय ॥ १०१ ॥
कढ़ै तेल पाखान सों फूल बेंत के माहिं ।
ऊसर मैं अंकुर कढ़ै पै खल मैं गुन नाहिं ॥ १०२ ॥
सब की औषध जगत में खल की औषधि नाहिं ।
चूर होत सब औषधी परि के खल के माहिं ।
करिय नीच सहबास नहिं जे अघ-काय मलीन ।
मति बिगरत आदर घटत होत धरम रति छीन ॥
गरुवो गिरि ताते धरनि ताहू तें अघवन्त ।
अघवन्तहु तें पिसुन जिहि धारत धरनि धसन्त ॥

कवित्त।

होय जो लजीलो ताहि मूरख बतावत है धर्म्म धरै ताहि कहै दम्भ को बढ़ाव है। चले जो पवित्र ताहि कपटी कहत जैसे सूर को कहत यामें दया को अभाव है ॥ दास गिरधर कहै साधुन को धूरत हैं उदर के हेत कियो भेष को बनाव है । पण्डित गुनीजन को औगुनी कहत सदा जगत में पापिन को सहज सुभाव है॥ १०६ ॥

दोहा ।

गूढ़ ग्रन्थ बन तर्पनी गौनी गनिका बाल ।
इनकी सोभा तिलक है भूमिदेव भूपाल ॥ १०७ ॥
बिन दूती कामी पुरुष राजा मंत्रीहीन ।
कोकसार को बचन यह इन बिन तेरह तीन ॥१०८॥
राजा संग बहु बोलिबो पन्नग को खिलवार ।
नित सरिता अवगाहिबो इक दिन बिपति अपार ॥
तीन बात तहँ नहिं करिय जहा प्रीति की चाह ।
जूवा धन व्यवहार अरु अबला ओर निगाह ॥११०॥
जब्ब असत सोना सहै राजकुमति सो नास ।
नास कहे सो दान फल पूजन बिन विश्वास ॥१११॥

कवित्त ।

भूलि मति जैयो यह माया महराजन की राजमई करम कहारे की नहर है । बदाबदी हाँके देत आवत अँ-धेरो पाख ढाके सब चाँदनी सी कला ना ठहरहै ॥ कर लै निकाई करनी कीरति दीनन पै करिहौ निकाई संग सोई तौ ठहरहै । पाइ राजद्वारो पुन्य डगर सुधारो राजद्वारे की बहार यारो पारे की लहर है ॥ ११२ ॥

दोहा ।

पांच बरस लौ लाड़िये पुनि दस ताड़िय भूप ।
सुत लखि सोरह बरस को करिय मित्र अनुरूप ॥
नवला तिय अरु अन्न नव गंगाजल बट छाँह ।

छीर पाक सुन्दर बसन षट जीवन जग माँह ॥११४॥
रसा रसायन सरस मति भोजन षटरस पीन ।
नवरस सह कविता सरस मिलै न पुन्य बिहीन ॥
गृह सम्पति रुचि धर्म्म में सुन्दर तिय बल देह ।
पण्डित पुत्र न पाइये पूर्व पुन्य बिन एह ॥ ११६ ॥
हय बाहन गुनवन्त तिय नव घृत पान पुरान ।
जिनहिं प्राप्ति जानिय तिनहिं आये तजि सुर-थान ॥

छप्पै ।

भूमि परत अवतरत करत बानक बिनोद्रस ।
पुनि जोबन मदमत्त तत्व इन्द्री अनंग बस ॥
बिजय हेत जड़ फिरत बहुरि पहुंच्यो बिरधप्पन ।
गयो जन्म गुन गनत अन्त कछु भयो न अप्पन ॥
थिर रहत न कोउ नरपति न बल रहत एक चहुं जुग्ग जस ।
सुइ अजर अमर नरहरि निरखि पिये भक्ति भगवन्त रस ॥

दोहा ।

तिय पतिब्रता सुसील सुत खान पान सब स्वच्छ ।
तन अरोग्य सुचि भोगजुत ताहि स्वर्ग सुख तुच्छ ॥
वृद्ध नारि निसि दधि असन कन्या रवि की धूप ।
प्रात नींद रति सुष्कफल ए षट काल सरूप ॥१२०॥
क्रोधित तिय बिधवा सुता कुथलबास सुत अज्ञ ।
नीच टहल भोजन अरुचि ए षट दुख प्रद सज्ञ ॥
मनमलीन कुत्सित असन भेड़ी-धन पट मैल ।

जाहि लखिय तिहि गुनिय यह आयो यमपुर गैल ॥
विष निसि में बहु जागिबो विष दिन में बहु सैन ।
विष नृपनारि निहारिबो द्विजबिरोध विष ऐन ॥

छप्पै ।

जदपि कुसँग बहु लाभ तदपि वह संग न किज्जिय ।
यदपि धनिक हो निधन तदपि घटि प्रकृत न लिज्जिय ॥
जदपि दान नहिं सक्कि तदपि सनमान न खुट्टिय ।
जदपि प्रीति उर घटै तदपि सुख उपर न टुट्टिय ॥
सुन सुजस दुआर किवार दै कुजस जमाल न मुक्किये ।
जिय जाय जदपि भलपन करत तऊ न भलपन चुक्किये ॥

दोहा ।

बन्धु लराको मित्र सठ गृह को अहि तिय दुष्ट ।
ये बिन कालहिं काल हैं समुझिय यह मति पुष्ट ॥
इन्द्र भये धनपति भये भये सत्रु के साल ।
कलप जिये तोऊ गये अन्त काल के गाल ॥ १२८ ॥
ब्रह्म अखण्डानन्द पद सुमिरत क्यों न निशंक ।
जाके छिन संसर्ग तें लगत लोकपति रंक ॥ १२९ ॥
सुख करि मूढ़ रिझाइये अति सुख पण्डित लोग ।
अर्द्ध-अग्य जड़ जीव को बिधिहु न रिझवन जोग ॥
दुरजन मण्डन कुटिलता सज्जनमण्डन प्रीति ।
मुखमण्डन कोमल बचन नरपतिमंडन नीति ॥१३१॥

कवित्त ।

मृगन को काल सिंह द्विरद को काल जरा बिपिन को काल दावानल पहिचानिये । रोग काल वैद्य कर्म भोग काल सत ज्ञान पाप काल प्रगट पराछित प्रमानिये ॥ दुरित को काल हरिभक्ति गिरधरदास सरप को काल खगपति उर आनिये । जग काल काल दण्डधर काल ताको काल कालहू को काल एक नन्दलाल जानिये ॥ १३२ ॥

मीनन को जीवन है सरित सरोवरादि दीनन को जीवन महीप जो सुमति को । पण्डित को जीवन है पुस्तक विचार चारु हरिरस जीवन है हरि को भगत को ॥ दास गिरधर कन्त कामिनी को जीवन है जीवन है दाम सदा महा लोभरत को । जीवन को जीवन है जीवन जगत महि राधिका को जीवन है जीवन जगत को ॥ १३३ ॥

छप्पै ।

विद्या नर को रूप प्रगट विद्या सुगुप्त धन ।
विद्या सुख जस देत सग विद्या सु बन्धु जन ॥
विद्या सदा सहाय देवताहू विद्या यह ।
विद्या राखत नाम लसत विद्याही तें गृह ॥
सब भांति सबन तें अति बड़ी विद्या को कबिजन कहत ।
शिव विष्णु विद्याबस करति नृपति न्याय विद्या चहत ॥

चोरि सकत नहिं चोर भार निसि पुष्ट करत हित।
अर्थिनहूं को देत होत छिन छिन में अगनित ॥
कबहूं बिनसति नाहिं लसति विद्या सुगुप्त धन ।
जिनको यह सुख साज सदा तिनको प्रसन्न मन ॥
राजाधिराज छिति छत्रपति यह एतो अधिकार लहि ।
उनको निहारि दृग फेरिबो यह तुमको है उचित नहि ॥
जे वे बारे भोग कहा जो बहु बिधि बिलसे ।
सदा रहत नहिं संग कबौं काहू पहं मिलसे ।
तू तो तजि है नाहिं आपुही ये उठि जैहै ।
तब ह्वै है सन्ताप अधिक चित चिन्ता ठैहै ॥
जो तजै आपु यह विषयसुख तौ सुख होय अनन्त अति ।
दुस्तर अपार भवसिंधु के पार होत भव बिमलमति ॥

दोहा ।

सर सूखे पच्छी उड़ैं औरे सरन समाहिं ।
मीन दीन बेपरन के कहु रहीम कहँ जाहिं ॥ १३७ ॥

सवैया ।

घोघन में बसि के न मिलै रस जे मुकतान पै चोंच चलैया । मालती की लतिका तजि कै केहि काम करील की कोटि कनैया ॥ श्रीमहाराज सरोवर हौ हम हंस हमेस यहां के बसैया । कोटिन काल कराल परै पै मराल न ताकिहैं तुच्छ तलैया ॥ १३८ ॥

कवित्त ।

साहिबी को पाय के निगाह भी तो राखो सही काहू की न आहि पर जाय डरिबौ करो । राखी नाहीं रैहै रे जहां की तहां जैहै जर जोर जोर केतऊ करोर धरिबो करो ॥ दाया राखि चित में पराया उपकार कर पाय नर काया ना अदाया भरिबो करो । जो पै तोहि कीनो भागवान भगवान तौ गरीब गुनमानन पै गौर करिबो करो ॥ १३९ ॥

चन्द्रमा पै दावा जिमि करत चकोरगन घनन पै दावा के मयूर हरखात हैं । भानु पर दावा करि बिकसत कमल पुंज स्वाती बुंद दावा कर चातक चिचात हैं ॥ सुकवि निहाल जैसे करि के कपोलन पै अलिन अबलि कर नित मेडरात हैं । ऐसे महाराजन पै दावा कवि-राजन को धूतन के द्वारे कहूं मूतन न जात हैं ॥ १३९ ॥

दोहा ।

सब सों ऊंचो सुकवि जन जातग रस की सोत ।
जिनके जस की देह को जरा मरन नहिं होत ॥१४०॥

कवित्त ।

द्विज बलदेव कहै आप महाराज तैसे वेऊ कवि-राज कछू आन अनुमाना ना । आप वित्त देत त्यों कबित्त बे विचित्र देत बरन अधिक एक ताको पहि-

चानो ना ॥ मानत रहे हैं जिनैं पुरखा पुरातन तें तिनको उचित मानिबो है हठ ठानो ना । नांगी समसेर सी जबान जोर जाकी रहै ऐसे कबि इन्द्र को खेलौना करि जानो ना ॥ १४१ ॥

सवैया ।

देत हैं अम्बर वे बकसीस ये देत असीस सदा सुखदाई । वे मुकुताहल हीरन देतये देत हैं कीरति जो जगछाई॥ वे बसु देत नवो रस ए करि छन्द प्रबन्धन की सरसाई । राजन सों कबिराजन सों न निहोरे कछू सम है बदलाई ॥

कुण्डलिया ।

बिधि सों कबि सब बिधि बड़े यामें संशय नाहिं ।
षटरस विधि की सृष्टि में नवरस कबिता माहिं ॥
नव रस कबिता माहिं एक से एक सुलच्छन ।
गिरधरदास विचारि लेहु मनमाहिं बिचच्छन ।
काल कर्म अनुसार रचत बिधि क्रम गहि हित सों॥
कबि इच्छा अनुसार सृष्टि बिचरत बर बिधि सों।

कवित्त ।

करन को दीनो नहिं दीखत कतहुं चीन्हों कबिन कबित्त कीन्हे सुजस निकेत हैं । भोज दीने हाथी घोड़े ओले से बिलाय गये जग तिनहूं को अजहूं लों जस सेत हैं ॥ जिनकी बड़ाई कबि निज मुख गाई भाई तेई नर

अजर अमरपद लेत हैं। जेतो कछु राजी हू के कबि देत राजन को तेतो कहा राजा कबि लोगन को देत हैं॥

सुने जे न नल बलि विक्रमादिहू को जस छायो अजों गायो है कवीश्वर प्रवीन को। माने सोई जाके चलि आई साख साखिन तें साखी जस जाके रैन बिदित अकीन को॥ शंकर जू बीरन के किम्मति को जाने वीर नेकहू न यामें काम किम्मति के हीन को। गादर तिया से लाज चादर को ओढ़े ते वे कादर लुकात देत आदर कबीन को॥ १४४५॥

ग्रंथन में गायो गुन चारिहू जुगन छायो श्रवन सो-हायो सदा जैसे राजा राम है। मरेहू अमर कीने नैनन पसारि देखो भोज बलि विक्रम के जस अभिराम है॥ कहै शिवराम कविजन को न दूखै कोऊ कविन के दूखै तें मिटत धनधाम है॥ दै दै धन गज बाजी राखैं कवि राजी भूप, कविन सों दगाबाजी पाजिन को काम है॥

स्फुट प्रकरण—कवित्त।

काँकर से मुकुता सुकुञ्ज जहां कुन्दन की पन्नाछा की पौरि परि जाके चहुंघा करी। बिहरत सुर मुनि उच्चरत बेद धुनि सुख की समेटि रासि बिधिना तहां करी॥ बासी ऐसे सर को उदासी भये बिछुरे तें कासी-राम तऊ कहूं ऐसी आसा ना करी। पर्यो कोऊ काल

तातें तक्यो तुच्छ ताल लघु लटयो जो मराल तौ चुनैगो कहूं काँकरी ॥ १ ॥

फूल न रसीले जाके फल न रसीले छिति छाँह के न सीले पथ पंथी दुखदाई है । बिटप न कामदार निपट नकामदार बड़े नामदार पूखी अधिक उचाई है ॥ सैयो श्रम सुआ अन्त पायो फिरि भुआ खेलि हारे जिमि जुआ जिय लगन लगाई है । जग में जनमि जो पै काहू के न काम आयो कहा सठ सेमर की बड़े की बड़ाई है ॥ २ ॥

माथ बन्यो मुख बन्यो मूछ बनी पूंछ बनी लाघव बन्यो है पुनि बाघ सम तूल को । रँग्यो चँग्यौ अंग बन्यो लङ्क बन्यो पञ्जा बन्यो कृत्रिम बन्यो है सब सिंहही के सूल को ॥ बोलिबे की बेर मौन गहि बैठे देवीदास तैसई सुभाव कूद फाँद करै हूल को । कुञ्जर के कुम्भन बिदारिवे की बेर कैसे कूकर पै निबहै यो स्वांग सार-दूल को ॥ ३ ॥

सवैया ।

मेटि के चैन करै दिन रैन ज्यों चाकरीये न सदा सुखकारी । ताको न चेत धरे गुन को भये नेकु सो लेस निकारत गारी ॥ लैहै कहा हम छाड़ि महाप्रभु है जु महारिझवार बिहारी । राज को संग कहै कवि गङ्ग सु-सिंह को संग भुजंग की यारी ॥ ४ ॥

कवित्त ।

धातु सिलदारु निरधारु प्रतिमा को सार सो न करता है विचार बीच गेह रे । राखि दीठि अन्तर जहा कछु अन्तर है जीभ को निरन्तर जपावत हरे हरे । अंजन विमल सेनापति मनरञ्जन दै जपि को निरञ्जन परम पद लेह रे । करि न सन्देह रे वही है मन देह कहा है बीच देहरे कहा है बीच देहरे ॥ ५ ॥

कीरति को मूल एक रैन दिन दीबो दान धरम को मूल एक सांच पहिचानिबो । बांढ़िबे को मूल एक ऊँचो मन राखिबोई जानिबे को मूल एक भली भांति मानिबो। प्रान मूल भोजन उपाधि मूल हाँसी देवी दारिद को मूल एक आरस बखानिबो । हारिबे को मूल एक आतुरी है रन मांझ चातुरी को मूल इक बात कहि जानिबो ॥६॥

सवैया ।

धूरि चढ़े नभ पौन प्रसग तें कीचभई जल संगति पाई । फूल मिलै नृप पै पहुंचै कृमि काठन संग अनेक बिथाई ॥ चन्दन संग कुठार सुगन्ध ह्वै नीच प्रसंग लहै करुआई । दास जू देखो सही सब ठौर न संगति को गुन दोष न जाई ॥ ७ ॥

कवित्त ।

कोऊ केहूं मिलै ताहि जानि सनमान करैं हँसि दीठि जोरै पुनि हिय सों देखावै हेत । आपनो गरब कहूं नेक

ना जनावै अरु कोऊ नहीं जाने जैसै गुपतहिं दान देत ॥ कोऊ उपकार करै ताको परकास करै धरम नियम पर नित रहै सावचेत। आप उपकार करि चुप रहै देवीदास एते सब गुन कुलवन्त में देखाई देत ॥ ८ ॥

हांसी में विषाद बसै विद्या में बिबाद बसै भोग माहि रोग और सेवा माहि दीनता । आदर में मान बसै रुचि में गलानि बसै आवन में जान बसै रूप माहिं हीनता ॥ जोग मे अभोग और संग में वियोग बसै पुन्य माहिं बन्धन औ लोभ में अधीनता । निपट निरञ्जन प्रबीन नये बीन लीने हरि जू सों प्रीति सबही सों उदा-सीनता ॥ ९ ॥

नाहीं नाहीं करै थोरे मांगे सब देत कहै संगन को देखि पट देत बार बार है। जिनके लखत भली प्रापति की घरी होत सदा सब जन मन भाय निरधार है ॥ भोगी ह्वै रहत बिलसत अवनी के मध्य कन कन जोरे दान पाट परिवार है । सेनापति वचन की रचना वि-चारि देखो दाता और सूम दोऊ कीन्हें एक सार है ॥

छप्पै ।

कबहुं द्वार प्रतिहार कबहुं दरदर फिरन्त नर ।
कबहुं देत धन कोटि कबहुं करतर करन्त कर ॥
कबहुं नृपति मुख चहत कहत करि रहत बचन बर।
कबहुं दास लघुकर्म्म करत उपहास जिम्य रस ॥

कछु जानि न सम्पति गर्बिये बिपति न यह उर आनिये।
हिय हारि न मानत सतपुरुष नरहरि हरिहि सँभारिये॥

कवित्त ।

जेते मनिमानिक हैं तेते मनिमानिक हैं धरा में धरा है धरा धूरही मिलायबी । देह देह देह फिरि पाइ ऐसी देह कौन जानै कौन देह कौन योनि जिय ज्या-यबी ॥ भूख एक राखि भूख राखै मति भूषन की भूषन की भूषन है भूषन न पायबो । गगन के जमगन गगन गगन दैहैं नगन चलैगो साथ न गन चलायबी ॥ १२ ॥

अतिही कराल कलिकाल की व्यवस्था कछू एही कवि रघुनाथ मो पै जात ना कही । देखिये विचार तौ अचार रह्यौ कुम्भनि में पुन गरुआई बनि आई हाट में रही ॥ तेली के सनेह रही नेम गेह बेस्यन के रहे हैं कसेरन के गेह सांच की सही । नदिन में पानीप परन तरिवरन में बरनी है बन केदरी के करनी रही ॥ १३ ॥

सवैया ।

तेरे चलाये चल्यो घर तें डरप्यो नहिं नीर समीर औ धूपै । पाल्यो मै तोहि हियो हित कै हठ तेरी सो माग्यो हहाकारि भूपै ॥ ऐसो सखा सुकदेव सु लोभ है तोरि सनेह ते सौरि सरूपै ॥ मेरी बिदाई के बार फटीक ह्वै जाय मिल्यो नृपसिंह अनूपै ॥ १४ ॥

कवित्त ।

मन्दर महिन्द गन्धमादन हिमालै मेरु जिन्हें चले जाने ये अचल अनुमाने ते । भारे कजरारे तैसे दीरघ दतारे मेघ मण्डल बिहण्डे जेते सुण्डा दण्ड ताने तें ॥ कीरति बिसाल छितिपाल श्रीअनूप तेरे दान जो अमान का पै बनत बखाने तें । इतै कविमुखजस आखर खुलत उतै पाखर समेत पील खुले पीलखाने तैं ॥ १५ ॥

सवैया ।

एक बचो सुरराज हथीय सुतावल बाड़व और न होनो । और सबै बकसे बलबीर बचे रवि के रथ के हय दोनो ॥ गङ्ग कहै कर उन्नत देखि सुमंगन मौज सुनी तजि मौनो । लङ्क सुमेरु लुटाय दई है रही मुख सालिगराम के सोनो ॥ १६ ॥

जाहिरी लोग जवाहिरी जाचक दानी औ सूम की कीरति गावैं । तौन के भौन को खाल कहा जिमि हाल के देखे हवाल बतावैं ॥ गग भनैं कुल धर्म छपै नहि घाम की टूकरी काम न आवैं । स्यार थरों में खुरी पुंछ कछर सिंहथरी मुकुतागज पावैं ॥ १७ ॥

कवित्त ।

बागन के बैर फूट कहिये कसेरन के कागज कितब फबै फूट काफरीन में । दीपक में नेह हानि दण्ड जोतिसी के जानि मान बनिता में मद अन्धता करीन में ॥

कोक में वियोग सोक सोहै लाट में बिलोक रुखता कठोरताई सूखी लाकरीन मे। रावरे के राज में बिराजै बृज ऐसी नीति भीति है दिवार पेचपागै पागदीन में॥ १८॥

दोहा।

तन की नारी कर गहन मन की नारी बैन।
चितवनही तें जानिये हित अनहित के नैन॥
करनधार बर बुद्धि नर विद्या बोहित पाय।
सन्मान मुकुता लहैं सभा सिंधु में जाय॥ २०॥
नृप ऐगुन जो आदरै गुन गनिये भल सोइ।
बक्र चन्द्र सिव सीस लहि सब विधि अन्दित होइ॥
दान समय तीरथ गमन विद्या पढ़न अहार।
यामे बिलम न कीजिये करि बृज बेगि विचार॥
पञ्चाइत परतिय गमन बंधुबिरोध निहार।
जिय नारत नित कलह में कीजै विमल विचार॥
चन्दन चाउर चून तिय बङ्क लङ्क सन सून।
ये नव पतरे चाहिये तुला राग रजपूत॥ २४॥
पय पानी अरु पानही पान दान सनमान।
यह नय मोटे चाहिये राजा और दिवान॥ २५॥
कस्तूरी कदली तुरै मोती उपबन धाम।
यह नय उत्तम चाहिये काम दाम अरु बाम॥ २६
दया भक्ति अरु तरुनि कुच रुख जु सिंधुर बाम।
ए नव दाबे गुन करैं रहुआ महुआ आम॥ २७॥

साहब सांचे गेह पुनि परन बिछौना घाट ।
ए नव सुकुले चाहिये हाट बाट अरु खाट ॥ २८ ॥
वस्ती बयद तपेश्वरी प्रोहित तन्दुल बान ।
एक नव भजू न चाहिये तेग नरेस दिवान ॥ २९ ॥
पाहन जिन जिन गरबधर हौं हिय कठिन अपार ॥
चित दुर्जन को देखियत तासो लाख हजार ॥३०॥
पिय सों मिलो बिभूति बनि ससिसेखर के गात ।
यह बिचारि अगार को चाहि चकोर चबात ॥३१॥

कबित्त ।

सीकरन करे सुख अधरन राग हरे बसनन दूरि धरे नेह निरबाहिये । अञ्जन मिटावै चारु चन्दन घटावै भुज कण्ठ लपटावै हार सोभियत ताहिये ॥ पति के समीप उपपति की बिपत्ति लागे ऐसी जलकेलि कबहूंना अवगाहिये । व्याकरनवारे सारे जानैं कहा मतवारे बारि जो नपुंसक तो बारिज न चाहिये ॥ ३६ ॥

सवैया ।

कै धरनी को गड़ो धरती रहै कै लुटि जाय उड़ाय के भैसा । कै रहि जाय धरोहरि काहु के कै करिकै करजा करि बैसा ॥ औलिया अम्बिया जेते भये रघुनाथ कहैं कर को कर जैसा । हक्क हलाल को दाम वफा करै काम न आवै हराम को पैसा ॥ ३४ ॥

औसर आपनो हेरे रहैं सब घात लगै चहैं दाव

चलायो। याते है भाग को पूरो भरोस वृथा करि लालच नाहक धायो ॥ कृष्ण भई यह सांची कहावत कीनो मोजावरी नेम न भायो। मांगन पूत गई तो मदार सो भो यो कुतार भतार गँवायो ॥ ३५ ॥

कवित्त।

दाख पकतात अरु अम्ब रहि जात कन्द मन्द सो लखात देखि ताकी सुद्धताई है। मिसिरी सेर बांचे तेऊ सांचे ना बखानि सकैं बसिकै कुसंग पुनि एती नफा पाई है॥ ऊख औ पियूष दोऊ समता न करि सकैं कहै सिवरास मिथ्या बिधि ने बनाई है। झूठे की झुठाई में मिठाई जौन पाई लौन मेवा में मिठाई ना मिठाई में मिठाई है॥ ३६ ॥

अन्तर निरन्तर के कपट कपाट खोलि प्रेम को झलाझल हिये मैं छाइयतु है। लटी भई आप सों भई है करतूत जौन जौन बिरह बिथा की कथा को सुनाइयतु है ॥ ठाकुर कहत वाहि परमसनेही जान दुख सुख आपने बिधि सों गाइयतु है। कैसो उत्साह होत कहत भते की बात जब कोऊ सुघर सुनैया पाइयतु है ॥ ३७ ॥

जौंलो कोऊ पारखी सों होन नहिं पाई भेंट तबहीं लों तनक गरीब सों सरीरा हैं। पारखी सों भेंट होत मोल बढ़े लाखन को गुनन के आगर सुबुद्धि के गँभीरा

हैं ॥ ठाकुर कहत नहिं निन्दो गुनवारन को देखिबे को दीन ये सपूत सूरवीरा है। ईश्वर के आनस तें होत ऐसे मानस जे मानस सहूरवारे धूरभरे हीरा हैं ॥ ३८ ॥

सुई को संयोग कहूं सपने मिलै तो मिलै केतिक दिननहूं ते ह्वै रह्यौ निनारो है। रावरे कृपा के पिंजरा में बसि चैन पावौ चिन्ता सो बिली को डर दूरि कियो भारो है ॥ दूध भात खात देखि कौआ अनखात तिने नेक ना सकात भयो रावरो पियारो है। रातो दिन राम राम रटत विचारो ताको चारो कस कीजै तौ सुआ को कौन चारो है ॥ ३९ ॥

बाधे द्वार चाकरी चतुरचित का करो सो उमिरि वृथा करी न राम की कथा करी। पाप को पिनाक री न जाने नाक ना करी सो हारिल की नाकरी निरन्तर हू ना करी ॥ ऐसी सूमता करी न कोऊ ममता करी सो बेनी कबिता करी प्रकासता सता करी। न देव-अरचा करी न ज्ञान चरचा करी न दीन पै दया करी न बाप की गया करी ॥ ४० ॥

एक चित्त ह्वै कर कबित्त करैं कबि तिनै केतिक सुनैया कहैं याही कौन लीखे हैं। आगे के सुनैया रिझवैया औ दिवैया दान रहे ना धरा पै यातें मौन मति सीखे हैं ॥ ग्वाल कबि गुन धुनि व्यंग रस लच्छना जे सज्जन को ईखे औ असज्जन को बीखे हैं। दावादार

दोगले दुसह दुरजन जिन्हैं दूखनही दीखे ज्यौ उलूकै रैन दीखै है ॥ ४१ ॥

मो कहत मै कहत रहत सदाहीं मूढ़ को मो को मैं एतो न विचार करि लेतो तैं । हौंई कियो ऐसोई करत करि हौंई ऐसो ठाकुर कहत सदा सगर भये तो तैं ॥ तू तो चहै और होय और सो करत कौन सुधि करि आदि अन्त अबै लो न चेतो तैं । याते मन मेरे चेत करता सबेरे येरे तेरे किये होतो तो कहा न कर लेतो तैं ॥ ४२ ॥

घोंघन को त्यागो ठौर ठौर उतरात फिरैं सीपी चहले तें खोज ल्यावे निज माल को । रंचक न राखो काई कुल की न रीति जासो बक को निकारो दूर टारो ले सेवार को ॥ कहै शिवदास राखो देखि के बिमल पात सुख सो सरोज राखो कैरव के जाल को । बरषै जो स्वाती सदा सरसे हमेस मोती एहो मानसर तुम तजो ना म-राल को ॥ ४३ ॥

सीस पै हुकुम राखै काहू सो न रोष राखै स्वामी की प्रतिज्ञा मन राखै चाहियतु है । देश राखै कोश राखै रय्यत सपोस राखै समय सहित मन्त्र भाषै चाहियतु है ॥ अरिन पै रोष राखै औगुन पै दोष राखै जंग परे जोति अभिलाषै चाहियतु है । जोस जुत नामदार बोले बोल सानदार ऐसो दानदार कामदार चाहियतु है ॥ ४४ ॥

बातही से राम ऐसे त्यागे सुत कौशलेस बात ते रमेस द्वार सेवै बलिराज को। बात तें महेशकू प्रजेसजा बिसार दई बात हारि पहुं तनै तजे राज साज को॥ बातही के बाधे नहि ते उतंग खड़े सिंधु अजहूं लो परो विरुध मानि बात लाज को । पालत जो बात बड़ो सोई जग जसी ख्यात बात के छुटे ते नर गात कौन काज को ॥ ४५ ॥

सवैया ।

बालि बँध्यो बलिराज बँध्यो कर सूलि के सूल कपाल थली है। कास जस्यो जर काल पस्यो बँध सेत धरी विष हाल हली है ॥ सिंधु मथ्यो किल काली नथ्यो कहि केशव इन्द्र कुचाल चली है। रामहु की हरी रावन बाम चहूं जुग एक अदृष्ट बली है ॥ ४६ ॥

ठाटो हती अपसी तपसी लपसी नहीं दांतन जात चबाई । देश के कूकर पीछो न छाड़त सांझ सियारन रारि मचाई ॥ कागन के घर सुक्ख भयो अरु चील्हन के घर बजा बधाई। श्रीमहराज के बाजबहादुर घोड़ी दई नहीं व्याधि बहाई ॥ ४७ ॥

छप्पै

सब ग्रथन को ज्ञान मधुर बानी जिनके मुख।
नितप्रति विद्या देत सुजस को पूरि रह्यो सुख॥

ऐसे कबि जिहि देश बसत निर्धनता लहि अति ।
राजा नाहि प्रबीन भई याही तें यह गति ॥
वे हैं बिबेक संपति सहित सब पुरुषन में अतिहिं बर ।
घटि कियो रतन को मोल जिन तेई जौहरी कूर नर ॥
जस कारन जगदेव सीस कंकालिहि अर्प्यो ।
जस कारन जयचन्द नीच घर नीर समर्प्यो ॥
जस कारन करि कर न कूच करि कछु न लुब्ध किय ।
जस कारन बलिराज लोक तीनो समर्प्पि दिय ॥
जस अजर अमर मोहन सुकबि जसहि परमपद पाइये ।
जाट बाशाह छितिपति सुनो रिस करि जस न गँवाइये ॥
तिय पति तें प्रतिकूल बाप सों पूत कपट किय ।
भाइन छोड़यो भाव मित्र को मित्र दाव दिय ॥
मेघ न बरषै नीर पीर महृत नहि लग्गै ।
तरवर छायाहीन बचन शाहन के डग्गै ॥
सब तेजहीन ससार भौ तीर्थ वर्त निःफल गयो ।
बैताल कहै बिक्रम सुनो अब प्रसिद्ध कलियुग भयो ॥

दोहा ।

संगतही गुन होत है ससतही गुन जाय ।
बांस फांस अरु मीसिरी एकै भाव बिकाय ॥ ५१ ॥

कुण्डलिया ।

चुगुल न चूकै कबहुं को अरु चूकै सब कोय ।
बरकन्दाज कमानिया चूक उनहुं ते होय ॥

चूक उनहुं ते होय जो बांधे बरछी गुल्ला ।
चूक उनहुं ते होय पढ़ैं पण्डित अरु मुल्ला ॥
कह गिरधर कबिराय कलाहू तें नट चूकैं ।
चुगुल चोकसीदार सार कबहूं नहिं चूकै ॥ ५२ ॥

दोहा ।

सुघर नारि अरु चतुर नर ये रसही बस होत ।
पाजी इतराजी बिना राजी कबौ न होत ॥ ५३ ॥

सोरठा ।

मैं ठाढ्यौ कछु और ठवर ये औरै ठट्यो ।
मेरो ठाटो ठौर वाको ठाटो ठटि रह्यो ॥ ५४ ॥

सवैया ।

जो बिन कामहि चाकर राखत ऐन अनेक वृथा बनवावै । आमद तें अधिकै करै खर्च ऋनै करि व्योहरै व्याज बढ़ावै ॥ बूझत लेखा नहीं कछु बैनहिं नीति की राह अजानि चलावै । भाषत है बिसुनाथ प्रभु वै तेहि भूपति के घर दारिद आवै ॥ ५५ ॥

निश्चय धर्म्म विचार गयो दबि भाइन भृत्यन नाहि चलावै । मन्त्रिय आदि सुलच्छहीन औ आलसी होय सलाह बहावै ॥ मानि सकोच करै व्यवहार वृथाही इनाम की रीति चलावै । भाषत है बिसुनाथ प्रभु वै सुतो भूपति ना कबहूं कल पावै ॥ ५६ ॥

नारिन की जो सलाह करै अरु भाइन मंत्रि स्वतंत्र बनावै । वैर कै चाकर राखै रहै औ अधर्म की राह सदा

मन भावै ॥ मन्त्री कह्यौ हित मानै नहीं अरु साहु को सासन ना मन भावै । भाषत हैं बिसुनाथ ध्रुवै नृप सो कछु काल में राज गँवावै ॥ ५७ ॥

झूठी सुनी तहकीक करै नहिं, ओछनि संगनि में मन लावै । रीझ पचावै डरै रन तैं व्यसनो जे अठारह खूब बढ़ावै ॥ ठट्ठा में प्रीति कुपात्र में दान कबीन द्विजान गुमान जनावै । भाषत है बिशुनाथ ध्रुवै अस ना भूपति कबहूं जस पावै ॥ ५८ ॥

चाकर दै धन बाचै जोई अठयो तेहि भागहि धर्म लगावै । साहु लिये धरै सातयो भाग छठो सुता व्याहहि हेत रखावै ॥ पांचयों बित्त बढ़े धरि चौथहि तीन ते खर्च करै लै बढ़ावै । भाषत है विशुनाथ ध्रुवै तेहि भूपति भौन न दारिद आवै ॥ ५९ ॥

भाइन भृत्यन विष्णु सो रय्यत भानु सो शत्रु न काल सो भावै । सत्रु बली सो बचै करि बुद्धि औ शास्त्र सो धर्महि नीति चलावै ॥ जीतन को करै केती उपाय औ दीरघ दृष्टि सदा फइलावै । भाषत है विशुनाथ ध्रुवै तेहि भूपति भैान न दारिद आ॰ै ॥ ६० ॥

होय नहीं कबहूं बसि काहू समै सब मै निज भाव जनावै । राखै रहै हुकुमै सब पै कोउ यार बनाय न तेज गँवावै ॥ साम औ दाम औ दंड औ भेद की रीति करै जो सबै मनभावै । भाषत हैं विशुनाथ ध्रुवै कल सो रहै भूपति राज बढ़ावै ॥ ६० ॥

जो हरि आन्हिक के मन लाय करै नृप आन्दिक अस्मति गावै । मानै सबै प्रभु को यह है प्रभु रूप सबै निज किंकर भावै ॥ देह ते आपुहि भिन्न गनै करि सासन भक्त प्रजान बनावै । भाषत है बिशुनाथ ध्रुवै दोउ लोक मैं भूपति सो सुख पावै ॥ ६२ ॥

दोहा ।

मृगया रत खेलै जुवा दिन सोवै परबाद ।
तिय असक्त अरु मद पियै सुनै गीत औ नाद ॥६३॥
वृथा अडम्बर ईरषा साहस दण्ड कठोर ।
द्रोह और पैशून्यता अर्थ दूखनो और ॥ ६४ ॥
वाक्य परुखता ऽसूयया दोष अठारह मान ।
अति असक्त इनके भये राजनास कृत जान ॥ ६५ ॥
अङ्क बेद ग्रह मेदिनी सम्वत विक्रम भूप ।
सावन पूनो को भयो संग्रह ग्रंथ अनूप ॥ ६६ ॥

चतुर्थखण्डः समाप्तः ।

कवि-नामावली।

१ अता। २ अम्बुज। ३ उदय मणि। ४ कवि नन्द

५ काशीराम, सभासद निज़ामत खां सूबेदार, आलमगीरी।

६ कृपाराम जयपुर, राजपुताना।

७ कृष्ण, सतसईकार बिहारीलाल के शिष्य, जयपुर राजपुताना।

८ कृष्ण, सेवकराम के भ्रातृपुत्र; असनी, फतहपुर।

९ केशव सनाढ्य मिश्र, ओड़छा, बुन्देलखण्ड।

१० गङ्गा बन्दीजन, सभासद बादशाह अकबर, दिल्ली।

११ गिद्ध।

१२ गिरधर कविराय, बन्दीजन, अन्तरवेद।

१३ गिरधरदास, बाबू गोपालचन्द अगरवाला, भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र के पिता, बनारस। १४ गोविन्द।

१५ ग्वाल बन्दीजन, मथुरा।

१६ घाघ कान्यकुब्ज ब्राह्मण, अन्तर वेद। १७ जमाल।

१८ जयदेव। १९ जीवराज।

२० टोड़र, राजा टोड़रमल्ल पंजाबी खत्री, दीवान आला, बादशाह अक़बर, दिल्ली।

२१ ठाकुर नरहरि वंशीय महापात्र बन्दीजन, असनी फतहपुर, सभासद बाबू देवकीनन्दनसिंह, बनारस।

२२ तुलसी, श्री गोस्वामी तुलसीदास; सरवरिया ब्राह्मण राजापुर प्रयाग।

२३ दास, भिखारीदास कायस्थ, अरबर प्रतापगढ़ ।

२४ दूलह, त्रिवेदी कालिदास के पौत्र, बनपुरा फतहपुर।

२५ देवीदास बुन्देलखण्ड ।

२६ द्विज बलदेव रीवां बघेलखण्ड ।

२७ धनीराम, नरहरि वंशीय महापात्र बंदीजन, सेवकराम के पिता, और ठाकुर कवि के पुत्र, असनी फतहपुर।

२८ नरहरि महापात्र बन्दीजन, असनी फतहपुर अन्तर वेद, सभासद बादशाह अकबर दिल्ली।

२९ निपट निरञ्जन जगविख्यात निरंजनस्वामी, बनारस।

३० निहाल, प्राचीन। ३१ पूरवी, ब्राह्मण मैनपुरी।

३२ प्राननाथ, कोटा। ३३ विहारीलाल सतसईकार, मथुरा।

६४ वृज, गोकुलप्रसाद कायस्थ, उपनाम वृज, बलरामपुर सूबे अवध।

३५ वृजनिधि, सवाई महाराज प्रतापसिंह, उपनाम वृज-निधि, जयपुर, राजपुताना।

३६ वृन्द, वृन्द सतसईकार।

३७ बैताल, बन्दीजन, सभासद विक्रमशाह ।

३८ बेनी, बन्दीजन, असनी फतहपुर, मोकामी लखनऊ।

३९ भगवन्त, हरिदासशिष्य, बृन्दाबन, मथुरा। ४० भरमी।

४१ भोज विहारीलाल भाट, चरखारी बुन्देलखण्ड ।

४२ मधुसूदन माथुर ब्राह्मण, इष्टकापुरी। ४३ मोतीराम।

४४ मोहन, सभासद सवाई महाराज जयसिंह जयपुर।

४५ यादव, सभासद बादशाह अकबर दिल्ली।

४६ रघुनाथ असेला बन्दीजन, सभासद म० बनारस।

४७ रहीम न०वाब अब्दुलरहीम खां, खानखाना बैरम खां के पुत्र, छाप रहीमन और रहीम, मुसाहब आला, बादशाह दिल्ली। ४८ रामकवि, प्राचीन, बुंदेलखंड।

४९ रामकवि, नरहरि बंशीय महापात्र बंदीजन, शिवपुर बनारस।

५० लाल, कवि बिहारीलाल त्रिपाठी, टिकमापुर, कानपुर।

५१ विश्वनाथ, महाराजा विश्वनाथसिंह देव बहादुर रीवां

५२ शंकर, नरहरि बंशीय महापात्र बन्दीजन, सेवकरामजी के ज्येष्ट भ्राता, असनी फतहपुर। ५३ शिवदास।

५४ शिवनाथ, बुन्देलखण्डी, सभासद महाराजा जगतसिंह पन्ना।

५५ शिवराम नरहरि वंशीय, असनी फतहपुर।

५६ शुकदेव, शुकदेवमिश्र, कंपिला सूबे अवध।

५७ श्रीपति, प्रयागपुर बहराइच। ५८ सकल।

५९ सूरदास, ब्राह्मण सूरसागरकार रामदास के पुत्र, मथुरा।

६० सेनापति, बृन्दावन; मथुरा।

६१ हेमनाथ, सभासद केहरी कल्याणसिंह।